प्रकाशक—
नागेश्वरप्रसाद मिश्र, "भारती"
महाशक्ति-साहित्य-मन्दिर,
बुलानाला, बनारस सिटी

मुद्रक—
विजयबहादुरसिंह, बी०
महाशक्ति-प्रेस,
बुलानाला, बनारस सि

प्रस्तावना

'दाद' चर्म-रोग है, अतएव पहले इस रोग के सम्बन्ध में न लिखकर, हम यह वतला देना उचित समझते हैं कि "हमारे चर्म की रचना कैसी है ?" ताकि विषय के समझने में विशेष सुविधा हो।

हमारी हड्डियों के मांस-वेष्ठित ढाँचे की रक्षा के निमित्त उस कुशल कारीगर परमात्मा ने हमें वस्त्र के रूप में चर्म प्रदान किया है। इस चर्म की रचना अनुपम एवं वड़ी ही रहस्यमय है। यह शारीरिक वनावट की आवश्यकता एवं उपयोगिता के अनुसार कहीं पतली और कहीं मोटी होती है। इसकी दो परतें हैं। ऊपरी परत अन्दर की परत की अपेक्षा वहुत ही मजवूत और Resistant अर्थात् घातक आक्रमणों से रक्षा करनेवाली है। अँग्रेजी में इसे Epidermis (एपीडर्मिस) कहते हैं। नीचे की दूसरी परत का नाम Dermis (डर्मिस) है। यदि हम अपनी एपीडर्मिस नामक त्वचा का छोटा सा टुकड़ा (Section) लेकर अणुवीक्षणयंत्र (microscope) की सहायता से उसका विश्लेषण करें, तो वह हमें अनेक परतों से वनी दिखाई देगी। पहली परत जिसे आंग्लचिकित्सकों ने Hornylayer (हॉर्नीलेयर)

नाम दिया है; उसकी Epithelium (एपीथिलियम) की सेलें (Cells) बहुत ही सुगठित हैं। यह कहीं मोटी और कहीं पतली होती है एवं यथेष्ट कड़ी भी होती है। किसी प्रकार के क्षार, तेजाब अथवा चोट से ही यह फट सकती है। इसके बाद Stratumlucidum or Transparent layer (स्ट्रेटमल्यूसीडम या ट्रान्सपेरेण्ट लेयर) Granular layer (ग्रेन्यूलर लेयर) mucous or malphagion layer (म्यूकस या मेलफीजियन लेयर) और सब के बाद Basal layer (बेसल-लेयर) है। बेसललेयर डर्मिनस नामक त्वचा के दूसरे परत से जुड़ी हुई है। अर्थात् इसी बेसललेयर से ऊपरी तमाम परतें या एपीडर्मिस बनती है।

डर्मिस में Nerves (नर्वज) Blood Vessel (ब्लड वेसल्स) और Lymphatics (लिम्फेटिक्स) होती हैं; जिनके द्वारा हमारे चर्म को पालन-पोषण के तत्त्व एवं स्पर्शशक्ति प्राप्त होती है। हमारे बाल, जो कि हमारी हथेलियों और तलुओं के अतिरिक्त शरीर के प्रत्येक ऊपरी भाग पर होते हैं—डर्मिस के भी नीचे तक होते हैं। बालों को मुलायम रखने के लिए प्रकृति ने Sebaceos glands (सेबेशियस ग्लैण्डस्) बनाये हैं, जिनसे एक प्रकार का तैलीयद्रव्य निकलता रहता है, जो बालों को तथा त्वचा को कोमल रखने, तथा पोषण में सहायक होते हैं।

यद्यपि देखने में दाद एक मामूली-सी बीमारी है, तथापि वास्तव में यह एक संक्रामक दुष्ट रोग है। यह त्वचा में एक प्रकार के कीटाणुओं अर्थात् Moulds (मोल्डस्) Fungy (फगी) Hyphomycetes (हाइफोमॉयसेलट्स) के उत्पन्न होनेपर होता है। ये कीटाणु प्राय एपीडर्मिस की हॉर्नीलियर, बाल या नाखूनों में पैदा होते पनपते तथा सूजन पैदा कर देते हैं। अधिकांश Infected (रोगोत्पादक कीटाणु युक्त) नाई के उस्तरे, धोबी के धुले कपड़े, तथा पशुओं में रहने-सहने के कारण हमारे शरीर में प्रवेश करते हैं। उक्त कीटाणु हमारी त्वचा पर आक्रमण करने के पश्चात् बालों के सहारे चमड़े की ऊपरी परत से नीचे की परत तक सहज ही में प्रवेश कर जाते हैं। यही कारण है कि ये हमारे शरीर के उस भाग पर जहाँ बाल बहुतायत से होते हैं बड़ी ही कठिनता से मारे जा सकते हैं। वहाँ औष-धियाँ भी सहज ही में प्रभाव नहीं दिखा सकती, क्योंकि डर्मिस तक दवा, तब तक नहीं पहुँच सकती जब तक कि ऊपरी त्वचा एपीडर्मिस को जला न दिया जाय। यह रोग अधिकाश सिर, ठुड्डी, चेहरा, गर्दन, हाथ, रान एव गुप्त स्थानों में होता है, जिसका वर्णन, इस "दद्रु-चिकित्सा" नामक पुस्तक में, आयु-र्वेदीय, यूनानी और एलोपेथिक पद्धति से अच्छी तरह किया गया है।

यह रोग आज कल भारत में प्रतिशत ९० मनुष्यों को होता

है, इसके लिए हजारों पेटेण्ट तथा ऊटपटाँग दवाइयाँ बाजारों में बिक रही हैं। पैसों की दवा का मूल्य आनों मे लेते हैं; भोली भाली जनता खूब ठगी जाती है। अपना पैसा खोकर भी लोग यथेष्ट लाभ नहीं उठा पाते। इस अभाव की पूर्ति के लिए ही विद्यावाचस्पति पण्डित गणेशदत्तजी शर्मा गौड़ "इन्द्र" ने यह दाद—जैसे सार्वजनिक विषय पर "दद्रु-चिकित्सा" पुस्तक लिखी है। पुस्तक बड़ी ही उपयोगी एवं लाभप्रद सिद्ध होगी ऐसा मुझे पूरा विश्वास है। लेखक की योग्यता विषयक बातें लिखना यहाँ व्यर्थ है। आप की लिखी "सन्तानशास्त्र", "स्वप्नदोष", "दीर्घायु" "स्त्रियों के व्यायाम" आदि अनेक स्वास्थ्य-सम्बन्धी पुस्तकें प्रकाशित हैं, जिनसे हिन्दी पढ़ी-लिखी जनता काफी लाभ उठा रही है। यह पुस्तक भी जनता में खूब आदर पाएगी ऐसी मेरी आशा है। इस पुस्तक को पढ़लेने के बाद दाद के रोगी को इधर-उधर की इश्तहारी दवाओं से छुटकारा मिल जायगा। यह पुस्तक रोगी के लिए ही नहीं; बल्कि चिकित्सक के लिए भी पथ-प्रदर्शक का काम देगी। मुझे आशा है, लोग इससे लाभ उठाकर शर्माजी के प्रयत्न को सफल करेंगे।

सिविल-डिस्पेन्सरी
आगर (ग्वालियर)
ता० १५ सितम्बर १९३२

(डाक्टर) एम० आर० लुम्बा
एल० सी० पी० एण्ड एस०

विषय-सूची

दद्रु-चिकित्सा

विषय-प्रवेश

"दद्रु" शब्द संस्कृत-भाषा का है। हिन्दी-भाषा मे इसे "दाद" कहते हैं। यह देखने में एक साधारण, किन्तु बड़ा ही खराब रोग है। सर्वसाधारण लोग इसे 'दाद' ही कहते हैं। यह चर्म-रोग है। शरीर के किसी भी स्थान पर हो जाता है। विशेषत. कमर, रानों अथवा ऐसे सन्धि-स्थानों में होता है, जहाँ शरीर का चमड़ा प्राय मिला रहता है और पसीना पैदा होता रहता है।

इसकी उत्पत्ति शारीरिक अपवित्रता से होती है। शरीर का वह भाग जिस पर मैल रहता हो, वहाँ शीघ्र ही सहज में दाद हो जाता है। जो लोग स्नान नहीं करते, अथवा स्नान तो करते हैं, किन्तु विधिपूर्वक नहीं करते, उनके शरीर में दाद पैदा हो जाता है। सडे, गन्दे और मैले पानी में स्नान करने से भी दाद हो जाता है। अतएव स्नान में विशेष सावधानी की आवश्यकता है, जिससे इस रोग के कीटाणु शरीर में पैदा ही न होने पाएँ। हम यहाँ स्नान करने की विधि—संक्षेप में लिख देना चाहते हैं।

स्नान कैसे किया जाय ?

यहाँ स्नान के समय आदि का विवेचन न करते हुए हम केवल स्नान की विधि ही लिखेंगे। स्नान के लिए सर्वप्रथम शुद्ध जल की आवश्यकता है। जल देखने मे काँच के समान स्वच्छ, स्वाद मे अच्छा और रंग में शुभ्र होना चाहिये। उसमें किसी प्रकार का कूड़ा-कचरा अथवा वदबू न होनी चाहिये। यदि घर पर ही स्नान किया जाय तो पवित्र, छना हुआ कुँए का पानी सर्वोत्तम होता है। ऐसे कुँए का; जिसका पानी पीने के काम में न आता हो, वर्षों से छाँटा न गया हो, वृक्षों के पत्ते वगैर: सड़ रहे हों, जल का रंग लाल-पीला या काला पड़गया हो, वदबू आती हो, स्नान के लिए कदापि न लें। ऐसे कुँए जिनमें उतरकर स्नान किया जाता हो—बावड़ी वगैर: में—स्नान नहीं करना चाहिये; क्योंकि लोगों के नहाने-धोने और कुल्ले आदि के करने से उनका पानी गन्दा हो जाता है। हाँ, यदि उनका पानी रोज-मर्रह चड़स, मोट या रहँट आदि से निकलता हो, तो स्नान करने में कोई हानि नहीं है।

नदियों-नालों और तालाव-पोखरो के पानी के सम्बन्ध में भी इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि उनका पानी निर्मल और दुर्गन्ध-रहित हो। समुद्र का पानी खारा होता है, अतएव

चमड़े में रूखापन पैदा करता है। इसलिए वह स्नान के लिए उपयोगी नहीं माना जा सकता।

स्नान के लिए विपुल जल लेना चाहिये। थोड़े से पानी-द्वारा "कौआ-स्नान" करने से कोई लाभ नहीं। स्नान को, हिन्दू लोग धर्म का एक अङ्ग मानते हैं; किन्तु धर्म के दशलक्षणों में स्नान कोई लक्षण नहीं, वल्कि "शौच" अर्थात् पवित्रता एक लक्षण अवश्य है। इसलिए स्नान-द्वारा शरीर की पवित्रता करनी चाहिये, न कि दो लोटे पानी उँड़ेल कर स्नान-क्रिया समाप्त कर देनी चाहिये। कई हिन्दू इस दृष्टि से स्नान में विशेष जल नहीं त्रिखेरते कि परलोक में इसका हिसाब-लेखा देना पड़ेगा। ये सब भ्रमोत्पादक विचार हैं। वैज्ञानिक सिद्धान्त यह साबित करता है कि जल पृथ्वी पर गिर जाने के पश्चात् सूर्य-किरणों-द्वारा पुन मेघ बनकर वृष्टिरूप में पृथ्वीपर गिरता है, वह नष्ट नहीं होता। सारांश यह है कि इन भ्रमात्मक सिद्धान्तों को छोड़कर स्नान, विपुल जल से ही करना चाहिये। नदी, तालाब, बावड़ी इत्यादि में तो उतरकर स्नान किया जाता है, परन्तु यदि अलग पात्रों में जल भरकर स्नान किया जाय, तो अपने शरीर के वजन के बराबर पानी लेना चाहिये।

शुद्ध पानी लेकर स्नान आरम्भ करना चाहिये और एक मोटे खुरदरे साफ धुले हुए अँगोछे को जल में भिगोकर उससे शरीर

के प्रत्येक भाग को अच्छी तरह रगड़-रगड़ कर मलरहित कर देना चाहिये; यहाँ तक कि शरीर का चमड़ा लाल हो जाय। स्नान के समय गुप्तस्थानों को तथा आस-पास के भागों को अच्छी तरह साफ करना चाहिये; क्योंकि इन्हीं स्थानों के मैले रहने से प्राय. वहाँ दाद हो जाता है। सप्ताह मे एक बार और यदि आवश्यकता हो, तो दो बार अच्छे बढ़िया साबुन से अथवा उबटन आदि लगाकर शरीर को साफ कर डालना चाहिये। सस्ते साबुन को काम मे नहीं लाना चाहिये—इनसे कई चर्मरोग पैदा होते हैं। जब स्नान-क्रिया अच्छी तरह समाप्त हो जाय, तब गीले अँगोछे को अच्छी तरह निचोड़कर उससे अपने सारे बदन को भली-भाँति रगड़कर पोंछ डालना चाहिये। पश्चात् गीले वस्त्र को त्याग-कर सूखा वस्त्र पहन लेना चाहिये। हाँ, अपने गुप्तस्थानो को भी रगड़कर पोंछना मत भूलो, इस प्रकार स्नान करनेवालों को दाद की बीमारी हो ही नहीं सकती। दाद की उत्पत्ति अपवित्रता से होती है, अतएव शरीर को पवित्र रखने के लिये हमारे लिखे अनुसार ही स्नान करना अत्यन्त उपयोगी होगा।

वस्त्र

जो लोग गन्दे, मैले कपड़े पहनते हैं, उनके शरीर पर यदि दाद हो जाय, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं (गन्दे कपड़े दाद पैदा करते हैं)। शरीर को छूनेवाला वस्त्र अधिक-से-अधिक अड़तालीस घण्टे बाद बदलने लायक हो जाता है। मैला होने से हमारा मतलब, केवल स्वास्थ्य को हानि पहुँचानेवाला है। हमने वस्त्र पहना और दूसरे ही क्षण उसपर मिट्टी के कुछ दाग लग गये—इसे हम मैला नहीं कहते। मैला वही है, जो देखने में भले ही साफ-सुथरा हो, किन्तु स्वास्थ्य को हानि पहुँचानेवाले परिमाणु उसमें उत्पन्न हो चुके हो, और इस प्रकार के परिमाणु ऐसे वस्त्र मे जो शरीर को छूता हो अड़तालीस घण्टे में उत्पन्न हो जाते हैं। अर्थात् शरीर को स्पर्श करनेवाला कपड़ा हर दूसरे रोज बदलते रहना चाहिये। गर्मी के मौसम में, या मेहनत का काम करने से पसीना पैदा होता है, उससे तो शरीर पर का वस्त्र चौबीस घण्टो में ही बदलने या धोने लायक हो जाता है।

प्राय देखा जाता है कि लोग, जितना बाहरी सफाई का ध्यान वस्त्रों के विषय में रखते हैं, उतना अन्दरूनी के लिए नहीं। ऊपर से साफ-सुथरी कमीज या कोट पहने होते हैं; परन्तु अन्दर की बनियान—गञ्जी या बण्डी बहुत ही मैली, दुर्गन्धपूर्ण और

घृणोत्पादक होती है। इस प्रकार के गन्दे कपड़े दाद और इसी प्रकार के दूसरे चर्म-रोग पैदा करते हैं। मैला लँगोट और मैली धोतियाँ दाद पैदा करती हैं। तात्पर्य यह है कि दाद से बचने के लिए बहुत ही साफ़-सुथरे वस्त्रों का पहनना आवश्यक है।

शरीर पर पहनने के कपड़े ही साफ़-सुथरे हों, सो नहीं; बल्कि ओढ़ने-बिछाने के कपड़े भी स्वच्छ होने चाहिएँ। जिन लोगों के बिछौने मैले होते हैं, उनके शरीर पर दाद हो जाता है। कई लोगों के तकिये इतने मैले होते हैं कि उन्हें देखते ही घृणा उत्पन्न होती है और जी मिचलाने लगता है। इसी प्रकार बिछाने के गद्दे और ओढ़ने की दोहर या रूई की रजाई-सौड़ भी मैले होते हैं, जिनमें से बदबू आती रहती है। दाद से बचने के लिए ऐसे मैले ओढ़ने-बिछौने से भी बचने की अत्यन्त आवश्यकता है।

भीगे हुए या गीले कपड़े पहनने से दाद अवश्य ही पैदा हो जाता है। इसलिए भूलकर भी गीले कपड़े शरीर पर नहीं पहनने चाहिएँ। वर्षाऋतु में अक्सर गीले कपड़े पहनने का अवसर आ जाता है, इसलिये उस ऋतु में अधिक सावधानी की आवश्यकता है।

दाद छूत की बीमारी है, जो कपड़ों द्वारा सहज ही एक से दूसरे के शरीर में पहुँच जाती है। दादवाले मनुष्य के उस वस्त्र को जो दाद से छुआ रहता हो, पहनने पर दाद अवश्य ही हो

जाता है। इसलिये सबसे उत्तम उपाय तो यह है कि किसी दूसरे के कपड़ों को कदापि अपने शरीर पर न धारण करें, और यदि ऐसा प्रसङ्ग आ ही जाय, तो बहुत ही सावधानी से काम में लाएँ। दूसरों की धोती, लँगोट, टोपी, कुरते आदि पहन लेने की जिन्हें आदत होती है, उन्हें प्राय' दाद हो जाया करता है; क्योंकि कभी-न-कभी तो असावधानी से दादवालों के कपड़े पहन ही लिये जाते हैं। बदन पोंछने के अँगोछे, टूवाल, रूमाल वगैर' कभी दूसरे मनुष्य के अपने काम में नहीं लाने चाहिएँ। इससे दाद ही नहीं, बल्कि अनेक रोगों से रक्षा होती है।

(वस्त्र ढीले पहनने चाहिएँ। तङ्ग-चुस्त कपड़े भी दाद की बीमारी उत्पन्न करते हैं।) तङ्ग कपड़ों से पसीना ज्यादा आता है और पसीना, मैल एवं कपड़े की गन्दगी दाद पैदा करते हैं। अतएव कपड़े सदैव इतने ढीले पहनने चाहिएँ कि शरीर में हवा अच्छी तरह लगती रहे। आजकल फैशन बन गया है कि लोग आवश्यकता से कहीं अधिक कपड़े पहनते हैं। आप, लोगों को ध्यान-पूर्वक देखेंगे तो चार-पाँच मनुष्यों के पहनने योग्य कपड़े एक आदमी के शरीर पर लदे पाएँगे। यह ठीक नहीं है। वस्त्र कम-से-कम उतने ही पहनने चाहिएँ, जितने—ग्रीष्म, शीत और वर्षा ऋतु के हानिकारक प्रभावों से शरीर की रक्षा कर सकें। गर्मी के मौसम में शरीर पर ४। ५ वस्त्र लादकर निकलने की

आवश्यकता ही क्या है ? ऐसे सैकड़ों समझदार (!!!) लोग हमारे देश मे हैं, जो गर्मी के मौसम मे भी पैरों में मोजे पहनते हैं, वे बूटों में घण्टों रहकर भयानक वदबू फैलाने के कारण होते हैं। लोगों ने वस्त्रों को ही सभ्यता का चिह्न समझ रखा है, यही भूल उन्हे रोगी वना रही है। सभ्यता और पोशाक भिन्न-भिन्न वस्तुएँ हैं। साधारण वस्त्र पहनकर भी सभ्य रहा जा सकता है और अप-टू-डेट फैशनेवुल भी महान असभ्य हो सकता है। इसलिये फैशन को त्यागकर साधारण वस्त्र पहनने का अभ्यास करना चाहिये ताकि दाद ही क्या और भी चर्मरोग जैसे—खाज, छाजन और फोड़े-फुन्सी आदि भी न होने पाएँ।

शरीर को रात-दिन कपड़ो में छुपाये रहनेवालों को दाद का हो जाना कोई आश्चर्यजनक वात नहीं है। शरीर को हवा और धूप लगने देना चाहिये। (जिस शरीर की त्वचा–हवा और धूप मे खुली रहती है, उसपर दाद के कीटाणु नहीं पनपने पाते) किसी कारण यदि चमड़े पर ऐसे कोई कीटाणु पहुँच भी जायँ या दूसरे किसी कारण से उत्पन्न भी हो जायँ तो वह धूप और हवा के कारण जीवित्त नहीं रह सकते। इसलिए शरीर को भलीभाँति सूर्यताप और शुद्ध वायु में रखने की वड़ी जरूरत है।

इसी प्रकार शरीर के उन वालों को भी साफ रखना चाहिये, जिनको हमेशा पसीने में रहना पड़ता है। जैसे वगल

तथा गुप्तस्थानों के वाल। या तो इन वालों को उस्तरे या कैंची से साफ करते रहना चाहिये अथवा उनकी जड़ों में मैल न रहने पाये इस वात की सावधानी रखनी चाहिये। इन स्थानों पर वालों की जड़ में मैल जम जाने और फिर पसीना आने से दाद-खाज वगैर चर्मरोग पैदा हो जाते हैं।

नाई-द्वारा दाद

हम पीछे लिख आये हैं कि दाद छूत की वीमारी है। यह एक से दूसरे के पास नाइयों के द्वारा भी पहुँच जाती है। नाइयों-द्वारा उत्पन्न होनेवाले दाद उन्हीं स्थानों में होते हैं, जहाँ उस्तरा चलाया जाता है। मुँह, वगल, और गुप्तस्थानों में जो दाद हो जाते हैं, वे प्रायः नाई के उस्तरे-द्वारा पैदा होते हैं। अधिकांश रानों और कमर में ही दाद होता है। नाई, लोगों को अपने उस्तरे गुप्तस्थानों के वाल साफ करने के लिये दे दिया करते हैं और दाद वाले स्थान पर लगे हुए उस्तरे को जव दूसरा व्यक्ति प्रयोग करता है, तव उसे भी दाद हो जाता है। इसके अतिरिक्त नाइयों की हजामत वनाने की पेटी और उस्तरे-कैंची आदि वहुत ही गंदे होते हैं। ऐसे वहुत ही कम नाई हैं, जो अपना सामान साफ-सुथरा रखते हों। नाइयों के हजामत वनाने वाले सामान का मैला

होना भी दाद उत्पन्न करने का एक कारण होता है। नाई लोग स्वयं भी इस बात का ध्यान नहीं रखते कि संक्रामक रोगवालों की हजामत न बनाई जाय, यदि बनाने का मौका आ ही जाय तो अपने उन औजारों को जो हजामत बनाने के काम में लाये गये हैं, किस प्रकार शुद्ध किये जायँ? दाद ही क्या कोढ़ तक के कीटाणु, नाइयों और हजामत बनानेवालो की असावधानी से एक दूसरे तक सहज ही में पहुँच जाते हैं।

जब नाई हजामत बनाता है, तो वह अपने उस्तरे से बालो को जड़ से साफ करता है; इस उस्तरे-घिसने का परिणाम यह होता है कि चमड़े का वह मुर्दार भाग जो ऊपर लगा हुआ था, मैल अथवा भूसी के रूप में निकल जाता है और नीचे से स्वच्छ, कोमल खाल निकल ही आती है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक रोम-छिद्र भी मलरहित स्वच्छ हो जाता है। बालों की जड़ मे जमा रहनेवाला वह तत्व जो बालों के लिए खूराक का काम देता था; और उन्हें चिकना तथा पुष्ट बनाये रखता था, उस्तरे की घिसन से साफ हो जाता है। जब उस्तरा मुँह आदि स्थानों पर दबाकर चलाया जाता है तब रक्त के वे सेल्स (Cells) जो भीतर इधर-उधर कार्य कर रहे थे दौड़-दौड़ कर उस जगह आ पहुँचते हैं जहाँ कि उस्तरा चल रहा हो। यही कारण है कि वह स्थान सुर्ख हो जाता है। इसके अतिरिक्त बालों को गलाने के लिए

साबुन आदि का भी उपयोग किया जाता है। सारांश यह है कि जिस अङ्ग की हजामत बनाई जाती है, उस जगह का चमड़ा इतना साफ और कोमल हो जाता है कि बीमारी के कीटाणु सहज ही चमड़े में अपना घर बना सकते हैं। नाइयों के औजारों से यदि चमड़ा छिल गया या कट गया और खून बाहर निकल आया, तो ऐसी जगह में दाद के कीटाणु बहुत ही जल्दी अपना अड्डा कायम कर सकते हैं। समझाने के लिए यह कहा जा सकता है कि खेत बिलकुल तैयार होता है और उस्तरे रूपी हल से उसमें दाद के बीज बो दिये जाते हैं।

आपने प्राय. देखा होगा कि कई मनुष्यों के मुँह पर दाद बड़ी भयानकता से होता है। कपाल, ठोड़ी, गाल, कण्ठ और गर्दन पर बुरी तरह फैला रहता है। यह नाइयों की कृपा का ही फल होता है। अतएव समझदार आदमियों को हजामत बनवाने के सम्बन्ध में विशेष सतर्क रहने की जरूरत है। जो नाई—गन्दे और मैले मनुष्यों की हजामत बनाता हो, जो अपने उस्तरे गुप्त स्थानों के बाल साफ करने को देता हो, जो छूत के रोगी के बाल बनाता हो, जिसने दाद, खाज, छाजन, फोड़े-फुन्सीवाले की हजामत बनाई हो, जिसकी पेटी; शरीर और गोदी पर डाला जानेवाला कपड़ा और उस्तरे वगैर. गन्दे रहते हो तथा स्वयं मैला रहता हो, उसे भूल-कर भी हजामत के लिए अपने पास नहीं फटकने देना चाहिये।

सबसे उत्तम बात तो यह है कि हरेक मनुष्य को अपनी हजामत का सामान अपना घरू रखना चाहिये। इसमें कुछ विशेष खर्च भी नहीं होता और किसी प्रकार का शक भी नहीं रहता। नाई को बुलाकर अपने घरू औजारों से बाल बनवा लिए जाएँ। केवल उस्तरा ही नहीं; बल्कि कैंची, सिल्ली, कघा, ब्रश, स्ट्रेप (चमड़े का टुकड़ा) और साबुन आदि सभी घरू होना चाहिएँ। ऐसा करने से विशेष चिंता करने की आवश्यकता ही नहीं रह जायगी। हजामत बनाने वाले नाई के हाथों को अपनी हजामत बनवाने के पूर्व अच्छी तरह साबुन और पानी से धुलवा देने चाहिएँ। कई नाइयों की आदत होती है कि अपनी पिंडली पर उस्तरे को घिसकर उसे तेज-पैना बनाते हैं। उनकी पिंडली, स्ट्रेप की जगह काम देती है। इस क्रिया के द्वारा बहुत संभव है कि दाद के कीटाणु आपके मुँह आदि स्थानपर चिपक जाएँ, इसलिए नाई को कभी भी उसकी टाँग पर उस्तरा नहीं घिसने देना चाहिए।

यदि हजामत का अपना घरू सामान नहीं हो, तो नाई के सामान को खूब उबलते हुए पानी से धो डालना चाहिये। इस प्रकार की सावधानी का फल यह होगा कि वे रोग-कीटाणु जो नाई के औजारों में थे, नष्ट हो जाएँगे। जो लोग अपने निजी उस्तरे वगैर रखें, उन्हे भी चाहिये कि हर महीने अपने औजारों को पानी में डालकर उबाल लिया करें। इतनी सावधानी रखने

वाले को नाइयों-द्वारा फैलनेवाले दाद से बिलकुल बेफिक्री हो जायगी। जो लोग नाइयों से हजामत बनवाकर दाद आदि चर्म-रोगों से अपने को बचाना चाहते हैं, उन्हें चाहिये कि निम्नलिखित दवाओं का महीन चूर्ण (Powder) तैयार कर रखें और हजामत के बाद उस स्थान पर लगादे, जहाँ के बाल उस्तरे से साफ किए गए हों।

एसिड बोरिक (Acid Boric)

झिंक आक्साइड स्टार्च (Zinc Oxide Starch)

केलेमिना (Calamina)

इन तीनों को समान भाग लेकर मिला लेना चाहिये और हजामत के बाद काम में लाना चाहिये। ये अँग्रेजी दवाएँ हैं। किसी भी अँग्रेजी दवा बेचने वाले के यहाँ से खरीदी जा सकती हैं। ये चीजे बहुत महँगी नहीं, बल्कि सस्ती ही हैं। इस पाउडर को सुगन्धित बनाना हो, तो कुछ बूँदें "ओलियम-रोज" (Oleum Rose) की अथवा किसी देशी इत्र की डाल लेनी चाहिएँ।

इन दवाओं में केवल केलेमिना (Calamina) ही इतनी अच्छी चीज है कि इस अकेली का भी प्रयोग किया जा सकता है। जो लोग विदेशी दवाओं का प्रयोग नहीं करना चाहते, उन्हें निम्नलिखित देशी चूर्ण महीन बनाकर काम में लाना चाहिये।

फिटकिरी	एक तोला
मुलतानी मिट्टी	तीन तोले
जस्ते का फूल	एक तोला

फिटकिरी और मुलतानी मिट्टी को पीसकर कपड़छान कर लेना चाहिये। इसके बाद जस्ते के फूल को मिला देना चाहिये। खुशबूदार बनाना हो, तो इसमें इत्र गुलाब या केवड़ा वगैरः की कुछ बूँदें आवश्यकतानुसार डाल देनी चाहिएँ। इसका प्रयोग भी हजामत के बाद ही करना चाहिये। यदि नाई के उस्तरे से ठोड़ी पर फुन्सियाँ उठ आएँ और चमड़ा फल आये तो निम्नलिखित मलहम तैयार करके लगा देना चाहिये।

हाइड्रार्जरी एमोनियेटा (Hg ammon)	आधा ड्राम
एसिड सेली सिलिक (acid Salycilic)	,, ,,
ज़िंक आक्साइड (Zinc Oxide)	एक ,,
मेन्थल (menthal)	बीस ग्रेन
वेसलीन (Vaseline)	एक औंस

यदि इसे सुगन्धित बनाना हो, तो इन दवाओं को मिलाने के बाद ओलियम रोज (Oleum Rose) की पाँच बूँदें इनमें और मिला देनी चाहिएँ। इस मलहम को बनाकर एक डिब्बी या शीशी में रख लेना चाहिये और वक्त जरूरत, काम में लाना चाहिये। अस्तु।

हजामत के पश्चात् पाउडर लगाकर फिर गर्म पानी और साबुन से मुँह को धो-पोंछकर शुद्ध तिल-तैल या सरसों का तेल मल देना चाहिये। धनी लोग बादाम का तैल भी काम मे ला सकते हैं। बाजारू तेल जो शुद्ध किये मिट्टी के तेल (white-oil) पर बने हुये खुशबूदार और रङ्गीन, चमक-दमकदार डिब्बों और शीशियों में बन्द मिलते हैं, अधिकांश हानिप्रद होते हैं। इसलिये शुद्ध तेल ही काम में लाना चाहिये। तिलों का तेल खुशबूदार तो नहीं होता, किन्तु लाभदायक विशेष होता है। शुद्ध तिल का तेल या सरसों के तेल की शीतकाल मे नित्य और अन्य ऋतुओं में यथावश्यक मालिश करते रहनेवालों को दाद पैदा होने का डर नहीं रहता।

वे लोग जो अपने हाथों अपने बाल साफ करते हैं, वे नाइयो-द्वारा पैदा होनेवाले दादों से भली भाँति अपनी रक्षा कर सकते हैं; परन्तु प्रायः देखा गया है कि ऐसे लोग भी अपने उस्तरे दूसरों को बाल बनाने के लिये निःसंकोच दे दिया करते हैं; यह ठीक नहीं है। प्रत्येक आदमी को अपना एक उस्तरा अलग रखना चाहिये और उसे अपने प्यारे मित्र को भी न देना चाहिये। इन घरू औजारों को भी कभी-कभी उबलते हुए पानी में डालकर शुद्ध करते रहना चाहिये।

'हजामत-द्वारा चर्म-रोग फैलते हैं।' इस सम्बन्ध में वैद्

भी चुप नहीं रह सके हैं। वे हजामत के सम्बन्ध में बड़ी ही साव-धानी रखने की आज्ञा देते हैं। अथर्व वेद में कहा है:—

"अयमगन् सविता क्षुरेणोष्णेन वाय उदकेनेहि ॥
आदित्यारुद्रावसव उदन्तु सचेतस सोमस्य राज्ञो वपत प्रचेतस' ॥१॥
अदिति' श्मश्रु वपत्वाय उदन्तु वर्चसा।
चिक्रित्सतु प्रजापतीर्दीर्घायुत्वाय चक्षसे ॥ २ ॥"

इन मन्त्रों के शब्दार्थ के झमेले में यहाँ न पड़कर केवल भावार्थ ही दिया जाता है। "उस्तरा लेकर गर्म पानी के साथ आओ, बालों को भिगाओ, और राजा की आज्ञा से हजामत बनाओ।" इसमें 'गर्म पानी' का उल्लेख है, जो बालों के गलाने और रोगोत्पादक कीटाणुओं को नष्ट करने में सहायक होता है। राजा की आज्ञा से हजामत बनाने का आदेश भी विचारणीय है। वेद बतलाता है कि राज्य का नियन्त्रण नाइयों पर रखने की जरूरत है, ताकि वे अपने उस्तरे आदि साफ रखें और औजार रखने की पेटी भी साफ-सुथरी रखें। अर्थात् राजा की ओर से लायसेन्सप्राप्त नाई ही हजामत बनाने का धन्धा करें, ऐसी वेद की इच्छा मालूम होती है। दूसरा मन्त्र बतलाता है कि "तेज अच्छे चलनेवाले उस्तरे से बाल बनाये जायँ, जिससे दीर्घायु प्राप्त हो, इसके लिये राजा ध्यान रखे कि नाइयों-द्वारा रोग के जीवाणु न फैलने पाएँ।" तात्पर्य यह कि उस्तरा तेज हो बोथरा

न हो। खराब धारवाले उस्तरे से चमड़ी छिल जाती है, जिससे सहज ही चर्म-रोग उत्पन्न होकर आयु का नाश होता है। यही बात निम्न मन्त्र भी बता रहा है—

"यत् क्षुरेणमर्चयता सुतेजसा वप्ता वपसि केशश्मश्रु।
शुभं मुखं मान आयु' प्रमोषीः।" अथर्व ८।२।१७

तेज उस्तरे से ही बाल बनवाए जायँ जिससे हजामत के समय हमारी आयु का हरण न हो। अर्थात् उस्तरा इतना अच्छा, तेज और रोग-कीटाणु-रहित हो, जो दाद-खाज आदि रोगों को पैदा करके मनुष्य को अल्पायु न बनाये। हजामत के सम्बन्ध में सावधानी रखने के लिए आचार्य चरक ने लिखा है—

"पौष्टिकं वृष्यमायुष्यं शुचिरूप विराजनम्।
केशश्मश्रुनखादीनां कर्त्तनम् संप्रसाधनम्॥" (सूत्र ५।९३)

बाल, दाढ़ी, मूँछ, नाखून आदि को उचित रीति से ही काटना चाहिये, अन्यथा दीर्घायु, सौंदर्य, पवित्रता और स्वास्थ्य आदि का नाश हो जायगा। यदि गँवार नाई के द्वारा खराब, गन्दे रोगोत्पादक औजारों-द्वारा हजामत बनवाई गई तो निस्सन्देह दाद जैसे खराब चर्म-रोगों का हो जाना संभव है। महर्षि चरक ने नाखूनों की ओर भी संकेत किया है, अर्थात् नहन्नी भी अतिपवित्र और तेज होनी चाहिये, क्योंकि यदि नाखूनों में दाद हो गए, तो फिर उनको हटाने में बड़ी ही कठिनाई हो जायगी। नाखूनों के

दाद बड़े ही भयानक होते हैं और बहुत ही सावधानी से इलाज करने पर कहीं लाभ होने की आशा की जा सकती है। इसी पुस्तक के 'आंग्लचिकित्सा' प्रकरण मे नाखूनों के दादो के सम्बन्ध में विशेष लिखा जायगा।

नाई-द्वारा उत्पन्न होनेवाले दाद को अँग्रेजी भाषा मे टीनिया बारबा (Tinea barba) कहते हैं। इसके सम्बन्ध मे भी आंग्लचिकित्सा प्रकरण मे वर्णन किया जायगा।

खान-पान

यह तो सिद्ध ही है कि दाद चर्म-रोग है, इसके बीजाणु खून में मिलकर चमड़े पर पलते हैं। यह बाहर से ही लगता है, सो नहीं—यह रक्त के दूषित हो जानेपर भी शरीर में पैदा हो जाता है। इसलिए मनुष्य को उचित है कि रक्त मे विकार उत्पन्न करने-वाले पदार्थों को कभी भी न खाएँ, न पीएँ। शरीर में विजातीय द्रव्य चले जानेपर रक्त में खराबी उत्पन्न होने लगती है, जिससे दाद जैसे अनेक भयानक चर्म-रोग हो जाते हैं।

हम यहाँ खान-पान के सम्बन्ध में अधिक कुछ भी नहीं लिखना चाहते; क्योंकि ऐसा करने से व्यर्थ ही पुस्तक के कलेवर की वृद्धि होगी। हॉ, कुछ सूचनाएँ दे देना आवश्यक समझते हैं।

भोजन इतना सादा और हलका होना चाहिये कि पेट को उसके पचाने में विशेष कष्ट न हो। अन्न, साफ-सुथरा और पुष्ट होना चाहिये। सड़ा, घुना, सस्ता, वदबूदार अन्न कदापि न खाना चाहिये। भोजन के साथ कन्द, मूल, फल, फूल, पत्र आदि की कोई हरी भाजी अवश्य होनी चाहिये। भोजन में घी, दूध, दही, छाछ (गाय की) आदि अवश्य होने चाहिएँ; क्योंकि आचार्यों ने तो इसके सम्बन्ध में यहाँ तक कह दिया है कि—"गव्य हीनं कुभोजनम्।" अर्थात् गाय से पैदा होनेवाले दूध, घी, दही और छाछ इत्यादि के बिना जो भोजन होता है, वह कुभोजन—आसुरी भोजन है। घर में शुद्धतापूर्वक उत्तम अन्न-जल से शीघ्र ही पचनेवाला जो भोजन बनाया जाय, वही भोजन अच्छा कहा जा सकता है। बाजारू—पूरी, कचौरी, मिठाइयाँ और चाट वगैर. स्वास्थ्य के परमशत्रु हैं—खून को बिगाड़कर चर्म-रोग पैदा करने में परम सहायक हैं।

मिर्च-मसालों का अधिक सेवन भी बुरा है। नशे की वस्तुएँ भी खून को बिगाड़ती हैं। वासी, सड़े पदार्थ एवं गुरुपाकी भोजन करने से, बदहज्मी से और अधिक मिठाई खाने से शरीर पर दाद की उत्पत्ति होती है। सारांश यह कि हमारा भोजन उत्तम अन्न से बना हुआ—शुद्ध, पवित्र, ताजा, हलका, स्वास्थ्यप्रद और सुस्वादु होना चाहिये। गन्दा, बासी, गुरुपाकी, मिठाइयाँ और

तलाहुआ भोजन हानिप्रद होता है। भोजन के साथ मीठा लिया जा सकता है, किन्तु अधिक मिठाई शरीर में पहुँच कर जहर का काम करती है। अक्सर देखा जाता है कि जेवनारो और दावतों में लोग पहले ठूँस-ठूँस कर इतनी मिठाई खा लेते हैं कि उससे घृणा उत्पन्न होने लगती है, तब कहीं नमकीन-चरपरी वस्तुओं की ओर नजर करते हैं। भोजन की यह विधि स्वास्थ्य के लिए अत्यंत भयानक है। ऐसा भोजन पाकस्थली पर भार बन जाता है और रक्त को दूषित कर देता है। जो दाद से बचना चाहें, उन्हें भोजन में भी सावधानी रखने की जरूरत है।

गन्दा, मैला, बदबूदार और खराब पानी पीने से खून में बिगाड़ पैदा होता है। इसलिए पानी के सम्बन्ध में बहुत ही साव-धानी रखने की आवश्यकता है। जो लोग हरकहीं का चाहे जैसा पानी हो पी लेते हैं, उनका रक्त दूषित होकर दाद पैदा हो जाता है। चाय, भंग और शराब इत्यादि रक्त के शत्रु हैं, इनसे बचना चाहिये, इसी तरह तम्बाकू, बीड़ी, सिगरेट, हुक्का, गाँजा, चंडू, चरस, अफीम और कोकेन आदि भयानक पदार्थ हैं। अधिक पान खाना भी हानिप्रद है। स्वास्थ्य को सुरक्षित रखनेवालों को इनसे बचना चाहिये। दाद से बचना हो, तो अपने खान-पान को उचित रूप में रखने का सर्वदा ध्यान रखना चाहिये।

वैद्यक-ग्रन्थों मे लिखा है कि—दूध-मछली एक साथ खाने,

अत्यन्त पतले, चिकने और गुरुपाकी पदार्थों के अधिक सेवन, मल, मूत्र, छींक और जँभाई आदि के वेगों को रोकने; भोजन के पश्चात् तत्काल मेहनत करने, अधिक लंघन से, भय और परिश्रम के पश्चात् पसीने में ठंडा पानी पी लेने, अजीर्ण में भोजन करने, वमन-विरेचन इत्यादि में कुपथ्य करने से तथा नया अन्न, दही, मछली, नमक, खटाई के विशेप सेवन एवं उड़द, मूली, तिल और गुड़ आदि के अधिक सेवन से, अजीर्ण में मैथुन करने, दिन में सोने और रात में जागने से वातादि दोप कुपित होकर त्वचा, रक्त, मांस और शरीर सम्बन्धी जलीयधातु दूपित हो जाते हैं। इनसे रक्त दूपित होकर दाद, खाज और कोढ़ आदि अनेक चर्म-रोग उत्पन्न हो जाते हैं। मनुष्य को दाद से बचने के लिए उक्त बातों पर ध्यान देना आवश्यक है।

यहाँ तक हम संक्षेप में दाद पैदा होने के कारण और उनसे बचने के उपाय बता चुके। अब हम आगे दाद का निदान और चिकित्सा लिखेंगे। भारतीय-चिकित्सा, यूनानी-चिकित्सा और आंग्ल-चिकित्सा, का वर्णन अलग-अलग प्रकरण में स्वतन्त्रता एवं विस्तार पूर्वक करेंगे। सबसे उत्तम बात तो यह है कि रोग होने के कारणों को ही नष्ट कर दिया जाय, जिससे रोग पैदा ही न होने पाएँ। रोग पैदा होने देना और फिर दवा-दारू के लिए दौड़ना-भागना ठीक उसी प्रकार है, जिस प्रकार

घर में चोरों को घुसने देने का प्रबन्ध न करके जब घर में चोर घुस आएँ तब हो-हल्ला मचाना। प्रत्येक मनुष्य को उचित है कि रोगोत्पत्ति के साधनों को ही पैदा न होने दें, यही सबसे उत्तम उपाय है। यदि रोग उत्पन्न हो गया हो, तो उसका उपचार करना चाहिये। अब हम आगे दाद का उपचार लिखेंगे।

भारतीय-चिकित्सा

वैद्यकशास्त्र में दाद को साधारण रोग नहीं माना है। चर्म-रोग में इसे दुष्ट रोग बताया है। वास्तव मे यह है भी भयंकर। आज, लोगों के शरीर पर दाद को देखकर किसी को कोई आश्चर्य नहीं होता। लोग इसकी ओर उपेक्षा की दृष्टि रखते हैं। अक्सर देखा गया है कि स्वयं दद्रु-ग्रस्त व्यक्ति भी विशेष चिन्ता नहीं करता; परन्तु यह भूल है। प्राचीन-आयुर्वेदाचार्यों ने इसे कोढ़ माना है। आज भी लोग इसे 'कच्चा कोढ़' अर्थात् चिकित्सा-साध्य कोढ़ कहते हैं, परन्तु प्रतिशत ५० को, कम या ज्याद: होता ही है अतएव लोगों ने इस ओर विशेष ध्यान देना छोड़ ही दिया है। दाद के आरम्भ में रोगी उतना चिंतित नहीं होता, जितना उसके फैलने या कष्ट देने पर होता है। मनुष्य को चाहिये कि दाद के आरम्भ होते ही उसका इलाज करे अन्यथा उसकी

जड़ जम जाने पर हटाना कठिन हो जाता है। इसे कोढ़ का एक भेद जानकर ही इसके इलाज में शीघ्रता करनी चाहिये।

हमारे आयुर्वेदज्ञ आचार्यों ने कोढ़ के अठारह प्रकार माने हैं, उनमें दाद भी एक है। यथा—

> कुष्ठान्यष्टादशोक्तानि वातात्कापालिकं भवेत्।
> पित्तेनोदुम्बरं प्रोक्तं कफान्मण्डलचर्चिके ॥ ८७ ॥
> मरुत्पित्तादृष्यजिह्वं श्लेष्मवाताद्विपादिका।
> तथा सिध्मैककुष्ठं च किटिभं चालसं तथा ॥ ८८ ॥
> "कफपित्तात्पुनर्दद्रुः" पामा विस्फोटकं तथा।
> महाकुष्ठं चर्मदलं पुण्डरीकं शतारुकम् ॥ ८९ ॥"
> त्रिदोषै काकणं ज्ञेयं—

(शार्ङ्गधर संहिता पू० अ० ७)

अर्थात्—१ वातजन्य कापालिक कुष्ठ; २ पित्तजन्य उदुम्बर कुष्ठ, ३ कफजन्य मण्डल और ४ विचर्चिका, ५ वात कफज ऋष्यजिह्व; ६ कफ और वातजन्य विपादिका कुष्ठ उत्पन्न होता है। ७ सिध्म कुष्ठ; ८ एक कुष्ठ, ९ किटिभ कुष्ठ; १० अलस कुष्ठ; ११ कफ पित्तजन्य दद्रु कुष्ठ, १२ पामा कुष्ठ, १३ विस्फोटक कुष्ठ; १४ महा कुष्ठ; १५ चर्मदल; १६ पुण्डरीक; १७ शतारुक और १८ तीनों दोषों के प्रकोप से काकण कुष्ठ की उत्पत्ति होती है।

माधव निदान में दाद के विषय में इस प्रकार लिखा है—

"सकण्डूरागपिडकं दद्रु मण्डलमुद्गतम् ।"

अर्थात्—दद्रु मण्डल कुष्ठ—खुजली, लाली तथा फुंसियों-सहित ऊँचा उठा हुआ मण्डलाकार होता है ।

दाद कई प्रकार के होते हैं । उनके रूप रंग और आकार प्रकार के कारण उनके कई भेद हैं । जैसे—सफेद, लाल और काले इत्यादि । काले और भयानक दाद को सर्वसाधारण भाषा में 'घोड़ा दाद' कहते हैं। दाद को प्राचीन भारतीय-विद्वानों ने बड़ा ही खराब रोग माना है। धार्मिक पूजा-पाठ के ग्रन्थों मे भी उनका माहात्म्य प्रदर्शित करते समय—"दद्रु कुष्ठहरं चैव दारिद्र्यंनोपजायते।" इत्यादि वाक्यों का प्रयोग किया है । अर्थात् दाद को भयानक रोग मानकर अपने उपास्य इष्ट-देव से भी उसके नष्ट करने की प्रार्थना की है ।

दाद का चकत्ता गोल होता है। इसीलिए इसे 'मण्डल कुष्ट' कहा है । जहाँ यह होता है, वहाँ की खाल सफेद पपड़ीदार हो जाती है। दाद के कीटाणु चमड़ी की स्निग्धता को नष्ट कर देते हैं। आरंभ में यह बहुत ही छोटा होता है और धीरे-धीरे फैल जाता है । कभी-कभी चौकोना चकत्ता भी होता है । जिस दाद के चकत्ते में फुन्सियाँ-सी हों, और उनसे पानी निकलता हो, वह बड़ा ही खराब होता है और जल्दी बढ़ता है । दाद की जगह कड़ी और आस-पास की खाल से कुछ उठी हुई होती है। कालेरंग

का दाद जिसे घोड़ा दाद भी कहते हैं, बड़ा ही भयानक होता है। यह तो काफी ऊँचा उठाहुआ होता है। गर्मी के मौसम में पसीना लगने से दाद में जलन सी होती है और वर्षा के आरम्भ में मानसून (बरसाती हवा) उठते ही दाद में खुजली उठती है। खाज मीठी-मीठी होती है। विशेष खुजलाने पर दाह—जलन होने लगती है और खून अथवा दाद से चेप-सा निकलने लगता है। "अमृतसागर" के लेखक ने दाद का "कच्छ-दाद" नामक एक भेद और भी माना है। वह लिखता है—"कच्छदाद" नामक एक कोढ़ का भेद है। हाथ-पैरों में अथवा नितम्बों (कूल्हों) के बीच जो फुन्सियाँ हों और उनमें दाह ज्यादा हो, उसे कच्छदाद कहते हैं।" इत्यादि।

दाद के कीटाणु यदि बाहर से प्रवेश करते हैं, तो वे पहले पहल ऊपर की खाल मे अपना घर बनाते हैं और फिर भीतरी खाल की झिल्लियों में घुसकर जम जाते हैं। जो दाद छूत से लगे हों, उनके पैदा होते ही इलाज करने से वे सहज ही मिट जाते हैं। उनकी जड़ अन्दर तक पहुँच जाने पर, बड़ी कठिनता से दद्रु-कीटाणुओ को मारा जा सकता है। जो दाद खान-पान, आहार-विहार की खराबी से उत्पन्न हुआ हो, उसके लिए रक्तशोधक औषधियाँ लेकर हटाना चाहिये। मलाशय को शुद्ध रखने का ध्यान रखना चाहिये और बाहर से भी उनपर दवा लगाते रहना

चाहिये। रक्त के दूषित होने पर जो दाद उत्पन्न होता है, उसकी परीक्षा यह है कि वह शरीर में स्थान-स्थान पर बड़ी भयानकता से फैलता है और जो बाहर के लगे हुए कीटाणु होते हैं वे पहले एक स्थान पर अपना अड्डा जमाते हैं और धीरे-धीरे बढ़ते हैं। 'छाजन' भी दाद से मिलता-जुलता रोग है, अतएव चिकित्सक को निदान के समय विशेष सावधानी की आवश्यकता है।

दाद के कीटाणु अतिसूक्ष्म होते हैं, जो अणुवीक्षण-यन्त्र (Microscope) द्वारा ही देखे जा सकते हैं। बिना किसी दूरबीन की सहायता के केवल आँखों से ही उन्हें देख सकना नितान्त असभव है। एक वर्ग इंच स्थान में हजारों की संख्या में पाए जाते हैं। दाद के कीटाणु गोल-गोल दाने से होते हैं। माला के गुरियों की भाँति आपस में मिले होते हैं। चमड़े में बहनेवाले रस, रक्त और मज्जा को खाकर जीवित रहते हैं। धीरे-धीरे इनका वंश फैलता रहता है और ज्यों-ज्यों वंश फैलता है, त्यों-त्यों ये अपना क्षेत्र भी बढ़ाते जाते हैं। हम यहाँ दाद के कीड़ों का एक चित्र पाठकों के समझने के लिए देते हैं। इस चित्र से अब समझ में आ गया होगा कि दाद के कीटाणु कैसे, किस शक्ल के और चमड़े की पर्त में किसतरह रहते हैं ? इन कीटाणुओं को नष्टकर देने से दाद मिट जाता है। ये कीड़े देखने में छोटे और साधारण होते हैं; किन्तु बड़े ही मजबूत होते हैं।

दाद के कीटाणु
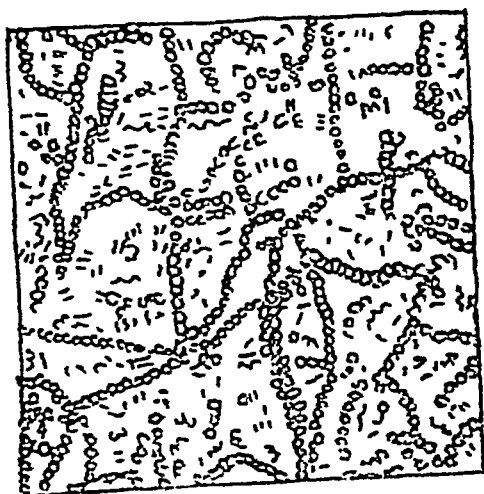
इस चित्र से अब समझ में आगया होगा कि दाद के कीटाणु कैसे, किस शक्ल के और चमड़े की पर्त में किस तरह रहते हैं ? (पृष्ठ-संख्या २८)

कभी-कभी तो ये तेज दवा से भी नहीं मरते; बल्कि और उद्दण्ड बन जाते हैं। औषधोपचार में इन्हें समूल नष्ट करने का ध्यान रखना चाहिये। यदि ये अधमरे हुए या इनमें थोड़ा भी जीवन रहा, तो ये धीरे-धीरे पुनः जीवित हो जाते हैं और पूर्वापेक्षा विशेष मजबूत बन जाते हैं। इसलिए दाद पर लगातार दवा का प्रयोग होना आवश्यक है। एकबार यदि यह भी मालूम हो कि दाद नष्ट हो चुका है, तो भी दवा बाद में कई हफ्तों तक लगाते रहना चाहिये; तभी दाद के कीड़े समूल नष्ट किए जा सकते हैं। अब हम दाद के नुस्खे यहाँ लिखेंगे, जिन्हें प्रयोग कर सहज ही में दाद नष्ट किया जा सकता है। एक सूचना यहाँ हम दे देना ठीक समझते हैं कि (दाद पर दवा लगाने से पहिले उस जगह को किसी खुरदरे कपड़े से रगड़ देना चाहिये या गर्म पानी और साबुन से धोकर शुद्ध कर देना चाहिये। (नाखून मे विष होता है, इस-लिए नाखून से न खुजलाना चाहिये। साथ ही नाखून से खुजलाने में नाखून में भी दाद हो जाने का भय रहता है।) जिस वस्तु से दाद के स्थान को खुरचा जाय, उसे अलग रखें, या उसे गर्म पानी में उबाल अथवा जला दें। घासलेट या फिनायल (तेल) में भी उस वस्तु को डाल देने से कीटाणु मर जायँगे। दाद को खुरचने के बाद सावधानी से काम लिया जाय, अन्यथा खुरचनेवाली वस्तु दूसरे स्थान पर लगकर दाद पैदा कर देगी।

पहले यहाँ हम कुछ शास्त्रीय औषधियाँ लिखेंगे पश्चात्, दूसरे नुस्खे लिखे जायँगे। भावप्रकाश में लिखा है—

(१) "कुष्ठं कृमिघ्नो दद्रूघ्नो निशासैंधवसर्षपा ।
अम्लपिष्टः प्रलेपोयं दद्रू कुष्ठ निसूदन. ॥"

कूठ, वायविड़ंग, पमाड़, हल्दी, सेंधानमक और सरसों को नीबू के रस में पीसकर लगाने से दाद नष्ट हो जाता है।

(२) "दूर्वाभयासैंधवचक्रमर्दकुठेरकाः काञ्जिकतक्रपिष्टा' ।
त्रिभि प्रलेपैरपिबद्धमूलां दद्रूं च कुष्ठं च विनाशयन्ति ॥"

दूब, हर्र, सेंधानमक, पमाड़ के बीज, बावची, सबको सम-भाग लेकर काँजी अथवा गाय की छाछ में पीसकर केवल तीन बार लेप करने से पुराना तथा भयङ्कर दाद भी नष्ट हो जाता है।

(३) "गंडालिकाख्यंतृणमपि सिद्धार्थकश्च स्नुहीपत्रम् ।
त्रयमपि समभागस्यादेषां द्विगुणस्तु दद्रुघ्न. ॥
अष्टगुणे गोतक्रेतानि प्रकृतानि सन्दध्यात् ।
दिवसत्रितयादूर्ध्वं सम्यङ्निष्पेपयेत्तानि ॥
वन्योपलेनघृष्ट्वाच दद्रूमालेपयेत्तेन ।
सप्ताहाल्लेपोयं दद्रूमचिराद्विनाशयन्ति ॥"

गंडलीक घास, सरसों और थूहर के पत्ते, तीनों समभाग, इनसे दूना चकवड़ लेकर इन सबों को अठगुनी छाछ में तीन दिनों तक भिगो दें। बाद इन्हें पीसें और दाद को जङ्गली कण्डे से रगड़कर इस दवा का लेप करें, तो सात दिनों में अवश्य ही दाद नष्ट हो जायगा।

योगचिंतामणि में लिखा है—

(४) "दूर्वाभयासैंधवैश्च चक्रमर्दं कुठेरका।
निशातक्रयुतोलेप' कण्डू दद्रु विनाशनः॥"

दूब, हर्र, सेंधानमक, पमाड के बीज, थूहर और हल्दी को छाछ में मिलाकर लेप करे, तो खुजली युक्त दाद नष्ट होता है।

(५) "चकूमर्द तिल सर्पप कुष्ठं वावचिका रजनीद्वयतक्रम्।
हंति विर्चर्चिक मण्डलदद्रू वर्पशतान्यपि नश्यति कंडू॥"

पमाड़ के वीज, तिल, सरसों, कूठ, वावची और दोनों हल्दी को समान भाग लेकर गाय के छाछ में पीसें और दाद पर लेप करें, तो खुजली युक्त दाद, विचर्चिका आदि यदि सौ वर्ष के पुराने हों, तो भी नष्ट हो जाते हैं।

(६) "पलाशपर्पटं घृष्ट्वा, लेप्यं निम्बुरसेनवा।"

ढाक के वीज और पित्तपापड़ा, दोनों को नीवू के रस में घिसकर लगाने से दाद नष्ट हो जाता है।

(७) "गुञ्जादाली, चित्रकंच प्रपुन्नाटजटाथवा।
प्रपुन्नाटस्य बीजानि धात्री सर्जरसोनिशा॥
लेपं सर्पपतैलेन घृष्ट्वा दद्रु विनाशनम्।"

चिरमिटी, देवदारु, चीता और पमाड़ की जड़, समान भाग लेकर इन्हें पानी में पीसलें और दाद पर लेप करें, लाभ होगा। अथवा पमाड़ के वीज, आँवला, सज्जी और हल्दी को पीसकर

कपड़छान करलें और सरसों के तेल में मिलालें अथवा सरसों के तेल में ही घोटकर तैयार करलें। फिर इसको दादपर लेप करें, तो दाद अवश्य ही जाता रहेगा।

शार्ङ्गधर सहिता में लिखा है—

(८) हेमक्षीरी विडंगानि दरदं गंधकस्तथा।
दद्रुघ्न कुष्ठ सिन्दूर सर्वाण्येकत्रमर्दयेत्॥
धत्तूरनिम्बताम्बूलीपत्राणा स्वरसै पृथक्।
अस्य प्रलेप मात्रेण पामादद्रू विचर्चिका॥
कंडूश्च रकसश्चैव प्रशमं यांति वेगत॥"

चूक, वायविड़ंग, हिंगुल, गन्धक, पमाड़ के बीज, कूठ और सिन्दूर इन सबको पीसकर—धतूरा, नीम और पान के रस मे खरल करें; जब दवा तैयार हो जाय, तब उसका दाद पर लेप करे, तो कैसा ही पुराना, भयानक खुजली युक्त दाद हो, अवश्य ही नष्ट हो जायगा।

(९) "दद्रुघ्नपत्रं दोषघ्नमम्लेवातकफापहे।
कड्डू कास कृमि श्वास दद्रुकुष्ठ प्रणुल्लघु॥"

पमाड़ के पत्तों की भाजी, दोषनाशक, खट्टी, वात कफ नाशक तथा दाद को नष्ट करती है।

वैद्यरत्न में लिखा है:—

(१०) "निशासुधारग्वधकाकमाची पत्रैः सदार्वी प्रपुन्नाट बीजैः।
तक्रेणपिष्टै कटुतैलमिश्रैः पामादिपूद्वर्त्तनमेतदिष्टम्॥"

हल्दी, मूर्वा, अमिलतास, काकमाची, देवदारु, चकवड़ के बीज, इन सबको गाय के छाछ में पीसकर, फिर सरसों का तेल मिलालें और दादपर लेप करे, तो दाद अच्छा हो जायगा।

(११) "व्योषं मूलकबीजानि प्रपुन्नाटफलानि च।
एतान्यम्ल प्रतिष्ठानि कुष्ठेपूद्वर्त्तन परम् ॥"

सोंठ, मिर्च, पीपल, मूली के बीज और चकवड़ के फल, इन सबको काँजी में खरलकर लेप करने से दाद नष्ट हो जाता है।

(१२) "सिध्मानां किटिभानांच दद्रूणां च विशेषत.।
अर्कपत्र रसे पक्वं रजनी कल्प सयुतम् ॥
कटुतैलं हरेत्तूर्णं मासात्कच्छूं विचर्चिकाम् ॥"

आक के पत्तो के रस मे हल्दी की लुगदी बनाकर उसे सरसो के तेल में खूब पकाकर लेप करें, तो एक महीने मे दाद नष्ट हो जाता है।

(१३) गुंजा चित्रक शंखभस्म रजनी दूर्वाभया लांगली।
स्नुक्सिन्धूत्थ कुमारिकाजलधरार्कक्षीरधूमैशजै ॥
दद्रूघ्नैडगजाविडंग मरिचक्षौद्रैश्च खारीयुतै।
गोमूत्रैर्गजचर्मदद्रुरकसा कण्डूघ्नमुद्वर्त्तनम् ॥"

चिरमिटी, चित्रक, शंख की भस्म, हल्दी, दूब, हर्र, कलिहारी, थूहर, सेंधानमक, बड़ी इलायची, घीकुवार, नागरमोथा, आक का दूध, पमाड़ के बीज, वायविडंग, कालीमिर्च, शहद,

खारीनमक, समान भाग लेकर गोमूत्र में खरलकर लेप करें, तो भयानक-से-भयानक दाद दूर हो जायगा।

(१४) "मृदूनि ताम्रपत्राणि तैलाद्यैशोधितानि च।
तच्चतुर्गुणसिन्धूत्थ चूर्णं लिप्तानि कारयेत्॥
उपर्यधो निधायाहोरात्रमेक भिषग्वरः।
तैलं ताम्राद्द्विगुणितं निम्बूरस विमर्दितम्॥
निश्चन्द्रकी कृतं तेन तानि पत्राणि लेपयेत्।
स्थापयित्वा तानि वस्त्रे ततस्तेनैव वेष्टयेत्॥
सप्तवारं तु मृल्लिप्तवस्त्रै संवेष्टयेत्ततः।
विधाय गोलकं शुष्कं पक्व गजपुटेन तत्॥
स्वाङ्ग शीत समुद्धृत्य गुञ्जाद्वयमितं नर.।
सितया शाणमितया चतु पिप्पलियुक्तया॥
युक्तं समक्षयेत्प्रातः शाकाम्ल रहिताशनः।
दद्रू कण्डूं विसर्पं च निश्चितम् नाशयेद्द्रुतम्॥

कोमल ताम्र-पत्र को लेकर तेल में शुद्धकर, अर्थात्—उससे चौगुना सेंधानमक लेकर और पीसकर ऊपर-नीचे लगाकर ताम्र-पत्र को एक रात-दिन, अर्थात्—चौबीस घण्टे रखा रहने दे, पश्चात् ताम्र-पत्र से दूना तेल लेकर नीबू के रस में खरल करे। जब तक तेल में की चन्द्रिका[1] नष्ट न हो जाय, तब तक घोटता रहे।

---

[1] चन्द्रिका उसे कहते हैं जो पानी और तेल के मिलने पर तेल का कुछ भाग पानी पर फैल जाता है।

चन्द्रिका मिट जानेपर ताम्बे के पत्र को निकालकर उसी पर उसे लपेट ले। इसके वाद उसपर कपड़ा लपेटे और फिर उसपर तेल का लेप करे। पश्चात् सात वार कपड़मिट्टी को लपेटकर गोला तैयार करले और गजपुट[1] की आग में फूँक दे। जब स्वय ठंढा हो जाय, तब निकालकर रख ले। दो रत्ती प्रात मिश्री या पीपल के साथ सेवन करने से दाद, खुजली, विसर्प, पित्ती (शीतपित्त) इत्यादि रोग नष्ट हो जाते हैं। जब तक दवा खाय तब तक खटाई, तेल, मिर्च और गुड़ आदि पदार्थों का परहेज रखे। अब हम कुछ अनुभूत और अच्छे-अच्छे योग यहाँ लिखेंगे।

(१५) काली मिर्च, दातूनी, आक का दूध, गोवर, छाछ, देवदारु, दोनों प्रकार की हल्दी, इन्द्रायण की जड़, वालछड़, लाल चन्दन, कूठ, कलिहारी की जड़, कनेर की जड़, चित्रक, मैनसिल, कलौंजी, हरताल, सिरस की जड़, नागरमोथा, वायविड़ग, पमाड़ के वीज, सतोना की छाल, नीम की छाल, कुरैया की छाल, किरमाला के वीज, गिलोय, कत्था, एकधारा थूहर का दूध, वावची, माल कँगनी, प्रत्येक एक-एक तोला; सींगी मोहरा दो तोले इन्हें चार सेर कड़वे तेल में और सोलह सेर गोमूत्र में डालकर आगपर

१ एक गज चौड़े, एक गज लम्बे और एक गज गहरे गड्ढे को जङ्गली कण्डों (उपलों) से आधा भरो, फिर दवा रखकर सारा भर दो, आग लगा दो। यह गजपुट की आग कहलाती है।

चढ़ा दें। मन्द-मन्द आँच से पकाएँ। जब गोमूत्र जलकर केवल तेल रह जाय, तब उस तेल को छानकर बोतल में भर लें। इस की मालिश से दाद समूल नष्ट हो जायगा।

(१६) नौसादर एक तोला, सुहागा भुना एक तोला, गन्धक एक तोला, मुर्दाशंख तीन माशे और कपूर दो माशे, इन सबको महीन पीसकर कपड़छान कर लें; पश्चात् गाय के घी मे मिलाकर मलहम बना लें। इस मलहम को दाद पर लगाने से दाद आराम हो जायगा।

(१७) सफेद राल एक छटाँक, सोहागा आधी छटाँक, आँवलासार गंधक आधी छटाँक, सूखे सिंघाड़े दो तोले चार माशे, तूतिया तीन माशे ; इन सबको पानी में घोटकर गोलियाँ बना ले। दही के पानी या सादे पानी घिसकर लेप करने से दाद समूल नष्ट हो जाता है।

(१८) गंधक एक तोला, राल एक तोला, सुहागा छः माशे, नौसादर छ. माशे, मुर्दाशंख छः माशे और कपूर तीन माशे। इन्हें पीसकर कपड़छान कर लें। जब लगाना हो, तब नीबू के रस मे मिलाकर लेप करें। इससे दाद जल्दी आराम हो जायगा।

(१९) राल, गंधक, सुहागा, खुरासानी अजवायन, सब समान भाग पीसकर रख छोड़ें। जब लगाना हो, तब नीबू के रस में घोटकर लगाएँ। दाद नष्ट हो जायगा।

(२०) सुहागा भुना पाँच तोले, मिश्री एक तोला, राल एक तोला, खेतचीनी एक तोला, नैनिया गन्धक एक तोला, भुना हुआ तूतिया छ: माशे, सफेदा काशगरी एक तोला, कबीला एक तोला, काली मिर्च एक तोला, सिंगरिफ एक तोला, सबको पीसकर बारीक चूर्ण कर लें, पानी या नीबू के रस में घोलकर लगाने से दाद नष्ट हो जायगा।

(२१) तूतिया, गट्टा, काली मिर्च, तीनो समान भाग लेकर कपड़छानकर तैयार रखें। पश्चात् गाय के घी को पानी में खूब धोकर शुद्ध कर लें और उक्त चूर्ण को घी में मिलाकर मलहम बना लें। यह मलहम दाद पर लगाने से दाद जाता रहेगा।

(२२) पारा तीन माशे, मैनसिल तीन माशे, हरताल तबकी तीन माशे, कत्था तीन माशे, सिंदूर तीन माशे, तूतिया देशी तीन माशे, आँवलासार गंधक तीन माशे, राल तीन माशे, सिंगरिफ कड़ा तीन माशे, मुर्दाशंख तीन माशे, मैनफल तीन माशे, गाय का मक्खन तीन तोले। पहले गन्धक और पारे को खरल करें जब कज्जली तैयार हो जाय, तब सब दवाओं को महीन पीसकर मक्खन में मिलाकर रख लें। इसे दाद पर लगाने से दाद नष्ट हो जायगा।

(२३) पारा, आँवलासार गंधक और तूतिया, तीनों एक-एक तोला लेकर इन्हें लोहे की कढाई में लोहे की मूसली से

चौबीस घण्टे घोटें; पश्चात् गाय का मक्खन बारह तोले डाल-कर तीन दिन घुटाई करे। इस मलहम को दाद पर लगाने से हरेक किस्म का दाद चला जायगा।

(२४) भुना हुआ सुहागा एक तोला, हवा के द्वारा मरा हुआ हीरा कसीस छ. माशे और आँवलासार गन्धक छः माशे, इन तीनों को अलग-अलग खरल करके महीन कर लें, पश्चात् शीशी में भरकर रख छोड़ें। जब आवश्यकता हो, तब थोड़ा-सा चूर्ण पानी में घोलकर दादपर लगाया करें। इससे दाद बिलकुल नष्ट हो जायगा।

(२५) सुहागा दो तोले, नौसादर एक तोला और कलमी शोरा छ माशे; इसे बारीक पीसकर पानी में घोलकर शीशी मे भर दो। दादपर फाहे से लगादो, यह बहुत तेज लगता है।

(२६) सुहागे की भस्म, शुद्ध गन्धक, शुद्ध मुर्दाशंख, इन्हे समान भाग लेकर चूर्ण बनालो। बाद मे चालमुंगरा के तेल मे मिलाकर दादपर मालिश करने से दाद नष्ट हो जायगा।

(२७) बाकुची एक तोला, भुना सुहागा एक तोला, सफेद चंदन का बुरादा एक तोला, शुद्ध आँवलासार गन्धक सात माशे, मैनसिल छः माशे, सफेद राल छ माशे, इन सबको कूट-छानकर चूर्ण बनालो। पानी, तेल, घी, नीबू का रस, चाहे जिसमें मिला-कर दादपर लगाने से आराम हो जायगा। धूप में बैठना चाहिये।

(२८) नारियल की नरेटी को फोडकर छोटे-छोटे टुकड़े करलो, फिर एक हाँड़ी में पीतल का कटोरा रखकर ऊपर से इन टुकड़ों को भर दो। फिर ऊपर से पीतल का एक वर्तन रखकर हाँडी के मुँह को कपरौटी करके वन्द कर देना चाहिये। ऊपर के पात्र में पानी भर देना चाहिये। इस हाँडी को चूल्हे पर चढ़ाकर धीमी-धीमी आग देना चाहिये। अगर एक सेर नरेटी हो, तो दो घण्टे अग्नि देता रहे। बाद होशियारी से उतारकर अंदर की कटोरी को निकाल ले, उसमे तेल निकला हुआ होगा। यदि तेल एक छटाँक हो, तो उसमें एक तोला देशी कपूर मिलाकर शीशी मे भरले। इस तेल को फाहे की फुरेरी से लगाना चाहिये। कैसा ही नया-पुराना, भयानक दाद क्यों न हो, चला जायगा।

(२९) गरीब मनुष्यों को जिन्हे उक्त दवा उपलब्ध न हो सके, मूली के पके पत्तों को नित्य नियमपूर्वक दादपर रगड़ना चाहिये ; लाभ होगा।

(३०) कच्चे पपीता (ऐरण्डककड़ी) का रस दादपर लगाने से भी दाद दूर हो जाता है। इसी प्रकार पमाड़ नामक पौधे के पत्तों को दादपर घिसने से भी दाद चला जाता है।

(३१) कच्छदाद की दवा—आक के पत्तों का रस और हल्दी के काढ़े का रस लेकर सरसों के तेल में पकाएँ। जब तेल मात्र शेष रह जाय तब उसे लगाएँ। कच्छदाद नष्ट हो जायगा।

(३२) दूसरी—मैनसिल, हीरा कसीस, आँवलासार गंधक, सेंधानमक, सोनामुखी, पत्थरफोड़ी, सोंठ, पीपल, कलिहारी, कनेर, पमाड़, वायविड़ंग, चित्रक, दातुनी, नीम के पत्ते, सब छ-छ मारो लेकर इन्हें पीसकर लुगदी बनालो। फिर दो सेर सरसों के तेल में डालकर पकाओ। इसमें दस तोले आक और थूहर का दूध तथा चार सेर गोमूत्र भी डाल दो। मंदाग्नि से सिद्ध करो। जब तेल मात्र रह जाय, तब छानकर शीशी में भरकर रख लो। इसके लगाने से कच्छदाद चला जायगा।

(३३) कूठ, वायविड़ंग, पमाड़ के बीज, तिल, सेंधानमक और सरसों, समभाग लेकर नीबू के रस में पीसकर दादपर लेप कर देने से दाद नष्ट हो जाता है।

(३४) पमाड़ के बीज, बावची, सरसों, तिल, कूठ, दोनों हल्दी, नागरमोथा, सबको समभाग लेकर छाछ में पीसें और फिर दाद पर लेप करें। दाद चला जायगा।

अब हम नुस्खों में ही पुस्तक के पृष्ठों को बढ़ना ठीक नहीं समझते। केवल इतना ही कह देना ठीक समझते हैं कि उक्त नुस्खे शास्त्रीय एवं अनुभूत हैं। संभव है, एक नुस्खा दाद को न हटा सके, तो हताश होकर या नुस्खे पर अविश्वास करके चुप न हो जाइये; बल्कि दूसरे नुस्खे को आजमाइये। इस प्रकार एक-न-एक दिन आप अवश्य ही दाद को समूल नष्ट कर सकेंगे। दाद

पर कभी भूलकर भी एकदम तेज दवा का प्रयोग नहीं करना चाहिये; बल्कि मन्द औषधि ही विशेष लाभप्रद सिद्ध होगी। हाँ, इतना अवश्य है कि मन्द औषधि-प्रयोग से समय अधिक लग जायगा; किन्तु लाभ स्थायी होगा। जब दाद आराम हुआ नजर आए, तब भी बाद में कुछ दिनों तक दवा लगाते रहना चाहिये, तभी जड़ से जायगा, अन्यथा बहुत सम्भव है कि समयान्तर में वह फिर हरा हो जाय।

यूनानी-चिकित्सा

'यूनान[१]' नामक देश में होनेवाले औषधोपचार को यूनानी चिकित्सा कहते हैं। यूनान और भारत का प्राचीन सम्बन्ध रहा है। बादशाही जमाने से यूनानी-चिकित्सा, हमारे देश में प्रचलित है। इसलिए हमें भी यहाँ यूनानी-पद्धति की दद्रु-चिकित्सा लिखना आवश्यक जान पड़ा। (दाद को यूनानी में "क़ूबा" कहते हैं) इस रोग के सम्बन्ध में लिखा है कि—"यह भी एक निहायत परेशान कुन और तकलीफ देह शिकायत है, जिससे मरीज बेचैन रहता है।" दाद की उत्पत्ति के सम्बन्ध में लिखा है—

"गलीज गिजाओं के खाने, या बदहजमी और बदन को

१ यूनान को आजकल ग्रीस (Greece) कहते हैं।

मैला-कुचैला रखने, लिबास और बिस्तर को साफोसुथरा न रखने, अर्सेतक न नहाने, मीठी चीजों के कसरत से खाने और भीगा हुआ कपड़ा पहनने आदि से यह शिकायत पैदा हो जाती है।"

दाद की अलामत, अर्थात् चिन्ह—निदान इस प्रकार बताये हैं—

"जिस्म के किसी खास मुकाम पर, खुशूसन (प्रायः) जाँघो और फोतों (अंडकोषों) में अक्सर दाद पैदा हो जाता है। दाद के मुकाम की जिल्द सख्त और खुरदरी हो जाती है और इसमें बेहद खुजली होती है, जिससे मरीज हमेशा खुजलाता रहता है। जिस कदर मरीज खुजलाता है, खारिश बढ़ती जाती है। दाद का मुकाम सफेद व स्याहीमायल हो जाता है। कभी-कभी इस मुकाम पर छोटे-छोटे दाने पैदा होकर आपस में मिल जाते हैं, जिससे शबनम (ओस की बूँद) की तरह रतूबत (फून्सियों का पानी-सा) बहती रहती है। कभी-कभी इस मुकाम पर खुश्की की वजह से भूसी-सी उड़ती रहती है। दाद के मुकाम पर दाग पड़ जाता है, जो जिल्द से कदरेऊँचा मालूम देता है। कभी दाद का मुकाम सुर्ख और मुतवर्रिम (सूजा हुआ) हो जाता है और इसमें छोटी-छोटी फुन्सियाँ होकर जलन व टीस हो जाती है।"

इलाज

(१) अच्छा सिरका, नीबू का रस और तेल गुलाब एक-एक तोला मिलाकर दाद के मुकाम पर लगाएँ। जरूर फायदा होगा।

(२) अफीम एक दिरम[1], सिघाड़े का आटा एक तोला, कागजी नीबू का अर्क इतना जिसमें दोनों चीजें घुल जायँ लेकर और घोटकर दाद पर लेप करें। दाद जाता रहेगा।

(३) अगर पेट साफ करने की जरूरत मालूम हो, तो कोई मामूली जुलाब देकर नीचे लिखी दवा तैयार करके पिलाएँ। शाहतरा, चिरायता, सरफूका, मुण्डी, छोटी हर्रे ; हरेक दो-दो दिरम, उन्नाव पाँच दाने। अगर गर्मी का मौसम हो, तो लाल चन्दन दो दिरम और सर्दी का मौसम हो, तो उशवा (मगरिबी) दो दिरम मिलाकर रात को गर्म पानी में भिगो दे और सुबह मसलकर छान लें, बाद इसे चार तोले शर्बत उन्नाव में मिलाकर पिलाएँ, कम-से-कम दो हफ्ता मुतवातिर इस दवा के इस्तेमाल से दाद रफा हो जायगा।

(४) सफेदा कासगरी, सुहागा, तूतिया, नौसादर, गन्धक (आँवलासार), भाँजूहरा; सब चीजें एक-एक दिरम, अर्क नीबू में घोटकर गोलियाँ बना ले। लगाने के पहले किसी मोटे खुरदरे

---

[1] 'दिरम' साढ़े तीन माशे वजन को कहते है।

कपड़े से दाद के मुकाम को रगड़कर इस गोली को पानी में घिसकर लेप करें। दाद आराम हो जायगा।

(५) पारा एक तोला, काली मिर्च छः माशे, कबीला छः माशे, इन सबको बारीक पीसकर कपड़-छान कर लें। बाद में धुले हुए गाय के चार तोले घी में मिलाकर एक मुर्गी के अण्डे की जर्दी और मिला दें, बस दवा तैयार हो गई। अब इसे वक्त जरूरत दादपर लगाएँ। दाद चला जायगा।

(६) गन्धक, पारा दो-दो दिरम; कपूर, अफीम एक-एक दिरम, फिटकरी, भुना हुआ सुहागा दो-दो दिरम लेकर बारीक पीस-छान लें। पहले गन्धक और पारे को खरल करके कज्जली बना लेनी चाहिये। जब सब दवा कुट-पिसकर तैयार हो जाय, तब पाँच तोले गाय के घी में, जो इक्कीस बार पानी से धुला हो, मिलाकर मलहम बना लें और काम में लाएँ, दाद को खो देगी।

(७) गन्धक, राल, सुहागा, मिश्री, नौसादर, सब सम-भाग हो, केवल गन्धक सवाई हो। इन्हें पानी में घोटकर गोलियाँ बना लें। नीबू के रस या मिट्टी के तेल में घिसकर लगाने से पहले जङ्गली कण्डे से दाद को खुजला लेना चाहिये। दवा लगाने के बाद धूप में बैठना चाहिये। इस दवा से जलन और सूजन होगी; परन्तु पन्द्रह-बीस मिनट में ठण्ढक पड़ जायगी। आराम होने पर भी चन्द दिनो तक दवा लगाते रहना चाहिये।

(८) मुर्दाशंख, गन्धक आँवलासार, नौसादर, सुहागा भुना हुआ, काली मिर्च, माजूफल, कत्था सफेद, बबूल का गोंद, मूली के बीज एक-एक तोला, तूतिया छः माशे, इन्हें कूट-पीसकर नीबू के अर्क में घोटकर गोलियाँ बना लें। वक्त हाजत (जरूरत) के दाद को खुजलाकर नीबू के रस या पानी में पीसकर लगाएँ। दाद साफ हो जायगा।

(९) बावची, घुमची, सरसों हरेक दो-दो दिरम; पमार के बीज चार दिरम, तूतिया दो माशे, इन सबको नीबू के रस में घोटकर गोलियाँ बना लें। जब जरूरत हो, तब पानी या सिरके में घिसकर दाद पर लगाएँ; आराम होगा।

(१०) पलास पापड़ा (ढाक के बीज), गन्धक, सुहागा भुना हुआ, अफीम हरेक दो-दो दिरम लेकर नीबू के रस में खरल करके गोलियाँ बना लें। लगाने से पहले दाद को खुजलाकर नीबू के रस में घिसकर लेप करें; दाद रफा हो जायगा।

(११) चौकिया सुहागा, गन्धक, गूगल जर्द (पीला), लोबान, कत्था सफेद, सब बराबर हिस्से लेकर नीबू के अर्क में घोटकर गोलियाँ बनालें। एक गोली पानी में घिसकर दाद के मुकाम पर लेप करें। एक ही हफ्ते में मर्ज बिलकुल गायब हो जाता है।

(१२) कपूर, चौकिया सुहागा, नौसादर, रसकपूर, गन्धक हरेक एक-एक दिरम; तूतिया एक माशा, इन्हें दो तोले कागजी

नीवू के रस में घोटकर गोलियाँ वनालें। इन गोलियों को जव दादपर लेप करना हो, तो मूली के पत्तों के रस में घिसलें; अगर मूली के पत्ते न मिले, तो मूली के वीजों के शीरे में घिसकर चन्दरोज दादपर लेप करें। एक हफ्ते में दाद जड़ से चला जायगा।

(१३) सुहागा, नौसादर, फिटकिरी, पमाड़ के वीज, अफीम शुद्धहरेक दो-दो माशे, चूना एक माशा, इन सवको नीवू के रस में दो घण्टे घोटकर गोलियाँ वनालें और दाद को खुजलाकर, मिल सके तो नीवू के रस मे वर्ना पानी में ही घिसकर लेप करे, वीमारी रफा हो जायगी।

(१४) संदल सुर्ख, सुहागा, अफीम, इन तीनों को वरावर मिकदार मे लेकर नीवू के रस में घिसकर लगाएँ। दवा लगाने के पेश्तर जंगली कण्डे से दाद के मुकाम को खुजला डालना चाहिये, और दवा लगाकर धूप में वैठना चाहिये। इस दवा को दो मर्त्तवा से ज्याद लगाने की जरूरत न पड़ेगी। जवतक आराम नहीं होगा, यह छूटेगी भी नहीं।

(१५) पुराना गुड़ थोड़ा-सा लेकर उसे हाथ से दवाकर नरम करलो और टिकली-सी वनाकर दादपर चिपका दो। थोड़ी ही देर में उखाड़कर फिर चिपका दो, ऐसा कई वार करो। तीन घण्टे वाद फिर इसी तरह करो। ऐसा करने से दाद की जगह के तमाम रेशे निकल आएँगे। इसके वाद अगर चाहें, तो

अँजीर के दूध का लेप करदें। दाद एक ही रोज में रफा हो जायगा। परीक्षित है।

(१६) लहसुन की राख करके शहद में मिला लो और दाद पर लगादो। आराम होगा। यह बच्चों की दाद के लिए तो निहायत फायदेमन्द है।

(१७) आँवला, मदार के फूल, पमाड़ के बीज; खट्टे दही में पीसकर दादपर लेप करे। मगर खसवाह (मूत्रेन्द्रिय) पर काम न लाएँ। यदि मदार के फूल न मिलें, तो मदार के पत्ते और दही न मिले तो छाछ या पानी में ही पीस कर लगा दें। जिस्मपर के सब दादों के लिए मुफीद है।

(१८) गन्धक, पमाड़ के बीज, नीलाथोथा, आँवला और भड़भुंजे के भाड़ की रेती, सब चीजें बराबर-बराबर लेकर पीसकर कपड़छान करलें और पानी में मिलाकर दाद पर लेप करें। दिन में दो-तीन बार लगाना चाहिये। दवा लगाकर धूप में जरूर बैठें।

(१९) डंडा थूहर (तिधारा थूहर न हो) का मगज (गूदा) कूटकर अर्क निकाल लें, फिर उसमें पमाड़ के बीजों को खरल करके तीन दिन तक रख छोड़ें। तीन दिन पड़ा रहने से इसमें तेजी आ जायगी। दाद को खुजलाकर दवा लगाओ। धूप में बैठो। अगर दाद, गलीज और मोटा (भैंसादाद) हो, तो

पहले उस्तरे या चाकू की धार से धीमी-धीमी चोटें मारकर खून निकाल दो और बाद में दवा लगाओ। जरूर रफा होगा।

(१९) पमाड़ के बीज, अच्छे जमे हुए दही में पीसकर लेप करो। दवा लगाने से पहले दाद के मुकाम को किसी चीज से खुजला लो।

(२०) रात के समय एक बर्तन मे आँवला भिगो दें और दूसरे में पमाड़ के बीज। सुबह पमाड़ के बीजों को आँवले के पानी से बारीक पीसकर दादपर लेप करे; फायदा होगा।

(२१) मैनफल को पानी में पीसकर दिन में दो-तीन वक्त दादपर लेप करते रहने से चन्द दिनों में दाद चला जायगा।

(२२) सरेस को दादपर लेप करदें और उसे दाद के मुकाम पर तब तक लगा रहने दें, जब तक दाद आराम न हो जाय। इससे दाद जाता रहेगा।

(२३) नीलाथोथा लेकर नीबू के रस में खरल करे, जब घोटते-घोटते नीबू का रस सूख जाय, तब फिर नीबू का रस और डाल लें, इस तरह सातबार करें। बस दवा तैयार हो गई। इसे अर्क नीबू में घिसकर दादपर लगाने से दाद रफा हो जायगा। इससे वर्म (सूजन) जाहिर होगा।

(२४) कुचला, पारा, गंधक, मैनसिल, स्याहजीरा, सफेद जीरा, आँबाहल्दी, हरताल, एलुवा, कालीमिर्च, सिंदूर, बावची,

पमाड़ के बीज; सब दो-दो दिरम लेकर कूट-छान लें, बाद सब दवाओं के वजन से तिगुना तेल लेकर उसमें सब दवा मिला-लें और लोहे की कड़ाई में, लोहे की मूसली से बारह घण्टे तक खरल करें। बाद दादपर लगाएँ; जरूर फायदा होगा।

(२५) मिट्टी की एक हाँड़ी लेकर उसमें जंगली कंडे इतने भर दो कि सिर्फ चार अँगुल खाली रह जाय। फिर इस हाँडी के मुँहपर एक अच्छा जमनेवाला काँसे का कटोरा रखकर उसमें पानी भर दो। अब एक गड्ढा खोदकर उसमें जंगली कण्डे भरकर उसपर मिट्टी का घड़ा रख दो और गड्ढे के कण्डों में आग लगा दो। ऐसा करने से काँसे के कटोरे में एक काले रंग की भाप जमा होगी, इसे थोड़ी देर में उठाकर पोंछकर किसी बर्तन में इकट्ठा कर लो। यह काले रंग की गाढ़ी होगी। इसे दाद पर लगाओ। लगाने से पहले खुजला लो।

(२६) आँवलासार गंधक, पमाड़ के बीज, सुहागा, कत्था, आँवला, इन पाँचों को पानी में पीसकर दादपर लेप करें। दाद रफा होगा।

(२७) इमली के बीज (चीएँ), नीबू के रस में पीसकर लगाने से दाद चला जाता है। अगर नीबू का रस न मिल सके, वो पानी में ही पीसकर लगाया जा सकता है। लगाने से पहले दाद को खुजला लेना चाहिये।

(२८) सिरका और इन्सान का पेशाव मिलाकर दादपर लगाने से भी दाद जाता रहता है।

(२९) मुर्गे की चर्वी वारह तोले, सिन्दूर पन्द्रह तोले; चर्वी को पिघलाकर सिन्दूर को उसमें मिलादें। इसके वाद नीम के लोढ़े से नीम की खरल में सात दिनों तक घोटें। घुटजाने पर सावधानी से किसी डिव्वी या शीशी में रख छोड़ें। वक्त जरूरत दादपर लगाएँ। किसी दवा से फायदा न हो, तो इससे जरूर होगा।

(३०) काँटेवाली थूहर पाँच सेर लेकर उसके छोटे-छोटे टुकड़े करलो और फिर उतने ही धान भी लेलो। एक मिट्टी की हाँड़ी में पहले थूहर की एक परत विछादो, उसपर धान की तह जमादो; फिर थूहर विछाकर धान विछादो; इस तरह कई तह जमादो। उस मटके में इतना पानी डालो कि सव डूव जायँ। इसका मुँह कपड़मिट्टी से वन्द करके पाँच दिनो तक धूप में रखो। वाद, इसमें से धान निकालकर उसके चिउड़े वनवालो। रोज दो तोले से तीन तोले तक खाओ। दाद तो आराम होता ही है; लेकिन कुछ महीनों तक लगातार खाने से सफेद कोढ़ भी चला जायगा।

अकोता दाद

दाद की एक किस्म और भी है, जिसे अकोता कहते हैं। प्रायः यह हाथ-पाँव के तलओं में होता है। इसका इलाज भी

इन्हीं दवाओं से किया जा सकता है। मगर इसके लिए एक दवा खास तौर से भी तैयार की जाती है।

(३१) जंगली उपले एक सेर, हरताल साढ़े सात तोले, तिलों का तेल एक सेर लेकर हरताल को तेल में घोटें 'पातालयत्र'[1] के जरिये तेल बना लें, इस तेल को दादपर लगाएँ, दो-तीन बार से अधिक लगाने की जरूरत न होगी, आराम हो जायगा।

आहार

अब हम ऐसी चन्द चीजों के नाम यहाँ लिख देना चाहते हैं, जो दाद की बीमारी में खाने से कोई नुकसान नहीं करतीं। थोड़ी मिर्चोंवाला बकरी के गोश्त का शोरबा, मूँग की दाल, गेहूँ की रोटी, लम्बी लौकी, पालक, कुलफा, तोरई, चावल, दूध, घी और मक्खन वगैर.।)

पथ्य

(खटाई, लालमिर्च, गर्ममसाला, शराब, चाय, गोश्त, लहसुन, प्याज, बैंगन, मसूर की दाल वगैर कभी न खायँ।)पहनने-

---

१—एक हाथ गहरा गड्ढा खोदकर उसमें एक हाँडी रखदें, फिर दूसरी हाँडी में दवा डालकर उसके ढकन में एक छेद करदें। अब दवा-वाली हाँडी को गड्ढेवाली हाँडी पर औंधी रखकर दोनों के मुँह की कपर-मिट्टी करदें। ऊपर की हाँडी पर आग जलादें। दवा नीचे की हाँडी में चली जायगी। बस दवा बन गई। इसे ही 'पातालयंत्र' कहते हैं।

ओढ़ने के कपड़े साफ-सुथरे हों, जिस्म को पाक-साफ रखें। पानी मे भीगा कपड़ा कभी न पहनें।

सूचना

हमने पाठकों के लिए अर्बी-फारसी के शब्दों को, इस 'यूनानी-चिकित्सा' प्रकरण मे सरल और भारतीय भाषा के शब्दों मे लिखा है, जिससे बिना किसी कष्ट के सहज ही समझे जा सकें। अब हम आगे के 'आँग्ल-चिकित्सा' प्रकरण में अँग्रेजी ढङ्ग से दाद की चिकित्सा के सम्बन्ध में अच्छी तरह प्रकाश डालने का प्रयत्न करेंगे।

आँग्ल-चिकित्सा

अंग्रेजी भाषा में दाद को 'रिंगवर्म' (Ringworm) कहते हैं। रिंग (Ring) शब्द का अर्थ 'गोलाकार' और वर्म(worm) का अर्थ है कृमि—कीड़ा। दाद के कीटाणु गोलाकार होते हैं, इस लिये इस रोग को Ringworm (रिंग वर्म) कहते हैं। दाद चर्म-रोग ((Skin disease) है, जो चमड़े में एक प्रकार के फंगस (Fungus) अर्थात् सूक्ष्मजीवाणुओं के पैदा होने से होता है। शरीर पर इसकी शक्लें, भिन्न स्थानों पर भिन्न प्रकार की होती हैं। अतएव हमें उनपर प्रकाश डालना, यहाँ आवश्यक है।

खोपड़ी का दाद

खोपड़ी के दाद के (Tinnea tonsurans) कीटाणु दो प्रकार के होते हैं (१) माइक्रॉसपोरोन आडोनाइ (Microsporon Audonini) और (२) ट्राइकोफाइटोन मिगेले स्पोरोन (Trichophyton megalo Sporon or Ecto-thrix) यद्यपि इनके नाम अलग-अलग हैं, तथापि दोनों एक ही प्रकार के हैं। अगर हम दूरवीचण यंत्र (Miroscope) से "माइक्रॉसपोरोन आडोनाइ" को देखें, तो उसकी शक्ल मकान के फर्श मे लगे चौकोर पत्थरो की सी दिखाई पड़ेगी; और "ट्राइकोफाइटोन मिगेलेस्पोरोन" माला के दानों की तरह नजर आएँगे। यह खोपडी का दाद अधिकांश छोटे बच्चो के सिर मे ही होवा है, जो पाँच से वारह वर्ष की उम्र के अन्दर आरभ होता है। यह दाद चौदह-पंद्रह वर्ष की उम्र होते-होते आप-ही-आप चला भी जाता है। वड़ी उम्र में यह दाद वहुत-ही कम होता है। खोपड़ी के दाद की कई किस्में हैं.—

(१) स्मॉलस्पोर्ड-मॉसेइक रिंगवर्म

(Small Spored or Mosaic Ringworm)

यह दाद खोपड़ीपर एक छोटी-सी गोल जगह में आरंभ होता है, जिससे वाल उड़ जाते हैं। उस जगह के वाल छोटे,

अधिक काले, कड़े और इधर-उधर मुड़े हुए दिखाई देते हैं। इस दाद की शक्ल 'खलिहान' की सी होती है। जिस प्रकार गेहूँ वगैर. का भूसा खलिहान में पड़ा हो, और उसके बीच मे एक खूँटे से पशु बाँध दिया जाय, वह पशु गोल चक्कर खाकर भूसे वगैर' की शक्ल गोल बनादे, उसी तरह इस दाद के कारण बालों की दशा इधर-उधर मुड़ी हुई तथा टूटी हुई-सी बन जाती है। चमड़े की रंगत मटमैली हो जाती है और उस स्थानपर पपड़ियाँ-सी दिखाई देती हैं। इस दाद के आस-पास प्राय. एक लाल रंग का चक्कर-सा भी होता है, जिसमे बाल अन्य बालो की अपेक्षा कुछ छोटे होते हैं। यह दाद का एक लाक्षणिक (Typical) रूप होता है; किन्तु अनेक बार यह दाद कोई छोटी-छोटी अथवा खास स्थानों मे सीमित नहीं होता; बल्कि अनियमित टिकलियाँ छोटे-बड़े आकार में देखी जाती हैं, जिसमें टूटे हुए या अच्छे बाल भी साथ ही होते हैं। यह दाद बड़ी ही कठिनता से आराम होता है।

यदि हम एक ऐसे बाल को जिसपर दाद के कीटाणुओं का प्रभाव हो, अणुवीक्षण (Microscope) यंत्र के नीचे रखकर देखें, तो वह हमे फर्श में लगे चौकोर चौको की भाँति दिखाई देगा। कभी-कभी कीटाणु धागे की आकृति के भी देखे गए हैं। बाल की बनावट टूटी हुई और उसके ऊपरी सिरे की नोक ब्रश के समान दिखाई देती है।

(२) लॉर्जस्पोर्ड-रॉजरी-रिंगवर्म

(Large Spoied or Rosery Ringworm)

यह खोपड़ी के दाद की दूसरो किस्म है; किन्तु इसके भी दो भेद हैं। पहले में यह बिलकुल गंज-सा दिखाई देता है, जिस पर से बाल बिलकुल उड़ जाते हैं और बाल अत्यन्त छोटे-छोटे बिन्दु से मालूम पड़ते हैं। इसलिए इसे कालादाद कहते हैं। इस दाद में बालों के खूँटे इतने छोटे होते हैं कि अणुवीक्षण यन्त्र की परीक्षा-द्वारा भी बड़ी कठिनता से देखे जासकते हैं। इस कारण कभी-कभी इसके और गंज के निदान में चिकित्सक लोग भ्रम में पड़ जाते हैं। दूसरे में, दाद के कीटाणु बडी ही कठिनता से नष्ट होते हैं। इस दाद मे पहले दाद की अपेक्षा बाल बड़े होते हैं, और इसपर पपड़ियाँ भी थोडी ही होती हैं। अणुवीक्षण यंत्र से परीक्षा करने पर इसमें के कीटाणु, माला के मणियों की भाँति आपस में सटे हुए दृष्टि आते हैं, जो बालों के अन्दर और बाहर उत्पन्न हुए मालूम होते हैं।

दाद की जातियाँ

१—कीरियान (Kerion) जिसका अर्थ लैटिन भाषा में मधुमक्खी का छत्ता होता है।) यह दाद अपने नाम के अनुरूप

ही होता है। इसे मामूली दाद नहीं समझना चाहिए, इसका निदान भी सहज ही में नहीं हो सकता। दाद का स्थान सूजा हुआ होता है, वहाँ के बाल सब उड़ जाते हैं। चमडा लाल रंग का तथा चमकीला हो जाता है। बालों की जड़ो में से पतला पीव-सरीखा पानी बहता रहता है, इसी कारण इसे कीरियान कहते हैं। इस दाद के स्थान को छूने से वह पिलपिला, पीव भरे फोड़े के समान मालूम होता है; परन्तु यदि उसे चीर दिया जाय, तो फोड़े की भाँति उसमें से मवाद वगैरः कुछ नहीं निकलता। इस दाद को चीरने से, सिवाय हानि के लाभ कुछ भी नहीं होता।

२—ट्रायकोफाय टायडिस् (Tricophytides) यह दाद त्वचा के किसी भाग में ही नहीं, वल्कि शरीर के सब भागो में उत्पन्न हो सकता है। इसमे रोगी सदैव खिन्न मन रहता है और थोड़ा-सा ज्वर भी कभी-कभी हो जाया करता है। दाद के आस-पास की ग्रंथियाँ कुछ सूजी हुई होती हैं। दाद की आरंभिक फुन्सियाँ सारे शरीरपर कई प्रकार की हो सकती हैं। वे अलाइयों के आकृति की, छाले के आकृति की, फोड़े-फुन्सी के शक्ल की, गहरे गुलाबी रंग के गुच्छेदार दागों की भाँति छाजन के अनुरूप, अथवा केवल लाल निशानों की तरह होती हैं। ये विशेषत: बदन-पर होती हैं; परन्तु कभी-कभी चेहरे और भुजाओं पर भी होती हैं।

इस दाद के फोड़े-फुन्सी तब तक कदापि अच्छे नहीं हो सकते,

जब तक कि शरीर के भीतरी विजातीय-द्रव्यों को बाहर निकालने के लिए इलाज न किया गया हो। इस दाद को हटाने के लिए शरीर के रस-रक्त की शुद्धि सबसे प्रथम आवश्यक है। पथ्य से रहना, औषधि सेवन तथा दवा लगाना तीनों उपचार साथ चलने आवश्यक हैं।

३—टेनिया सरसीनॅटा (Tinea Circinata) यह शरीर के जिस भागपर होता है, वह लाल रंग का पपड़ीदार और कभी-कभी छाले सरीखा होता है। इसके चकत्ते प्रायः गोल और गुलाबी रंग के होते हैं। जो छालेदार चकत्ते होते हैं, वे बहुत जल्दी इधर-उधर फैल जाते हैं और गोल चक्कर सरीखे होते हैं; इसीलिए अँग्रेजी भाषा में इसे टीनिया सरसीनॅटा कहते हैं। प्राय. औषधोपचार-द्वारा यह दाद आराम हुआ-सा मालूम होता है; किन्तु कुछ दिनों बाद फिर उभर आता है और उस जगह अर्द्ध-वृत्ताकार दाग बन जाता है। रानों और बगलों में, जहाँ गर्मी और नर्मी रहती है, वहाँ यह अधिकतर होता है और खूब फैलता है, खुजली भी खूब होती है। इस कारण कई चिकित्सक इसे 'एग्जीमा मार्जीनेटम' (Eczema marginatum) अर्थात् छाजन की एक किस्म कह देते हैं। यह दाद रानों से पैदा हो कर, फैलता हुआ कभी-कभी पेट तक भी आजाता है और रानों से नीचे की ओर भी फैल जाता है। यह गर्म देशों में अधिकता

से होता है। इसीको धोबी दाद (Dhobi's Itch) घोड़ा दाद और भैंसा दाद भी कहते हैं। यह प्रायः अण्डकोषों पर होता है और वहाँ से कभी-कभी आगे भी फैल जाता है।

४—टीनिया बारबा (Tinea barba) इसे ठुड्डी का दाद भी कहा जा सकता है। चेहरे पर कई प्रकार के दाद होते हैं, कोई एक खास किस्म चेहरे के दाद की नहीं है। यह गोल-गोल चकत्तेदार होता है। जैसा बदन पर होता है, वैसा भी होता है और कीरियान की आकृति का भी होता है। नाइयों के गन्दे और मैले उस्तरों से हजामत बनवाने के कारण जो बार्बर्स इच (Barber's itch) होता है, वह भी 'कीरियान' से मिलता-जुलता होता है। इसे हम सीधे शब्दों में 'नाई का दाद' कह सकते हैं; क्योंकि यह गंदे उस्तरे से हजामत बनवाने के कारण उत्पन्न होता है। जहाँ पर दाद होता है, वह भाग कुछ उठा हुआ और सूजा हुआ होता है। उस जगह दर्द भी होता है। दाद की जगह दाने-दाने से दिखाई देते हैं। इन दानों को देखकर ही यह निश्चित किया जाता है कि 'यह दाद ही है।' ठुड्डी के बाल दाद के कारण उतनी जल्दी नहीं टूटते जितने कि सिर के; क्योंकि सिर के बालों से दाढ़ी के बाल कुछ विशेष कड़े होते हैं।

५—हथेली, पाँव और नाखूनों के दाद। अब अनुभव द्वारा यह सिद्ध होता जा रहा है कि हथेली, पैर के तलवे और

नाखूनों में भी दाद होता है। कभी-कभी तो देखा गया है कि हाथ की हथेली, पाँवों के तलवे एक साथ दाद से भरे हुए होते हैं; किन्तु कभी-कभी केवल नाखून या केवल हथेली अथवा सिर्फ तलवे में ही दाद होता है। हथेली मे दाद दो प्रकार का होता है। (१) एक्यूट—जो छाजन से बहुत कुछ मिलता-जुलता है, और (२) क्रॉनिक—जिसमे सुर्खी होती है या पपड़ी-सी उतरा करती हैं। क्रॉनिक में कष्ट बिलकुल नहीं होता, फिर भी कभी-कभी छाजन की भाँति दुखदायी हो जाता है। पाँवों के तलओं में कभी-कभी हथेली के दाद के अनुरूप ही दाद होता है; इसमें चमड़ा फटता और उखड़ता रहता है। अँगुलियों के बीच का मांस भी सफेद रंग का निर्जीव-सा हो जाता है।

जब नाखूनों में दाद आरंभ होता है, तब नाखूनों का रंग हलका मटमैला, पीलापन लिए होता है। यहाँ के कीटाणु, कभी-कभी तो अणुवीक्षण यत्र-द्वारा भी बड़ी ही कठिनाई से देखे जाते हैं। केवल नाखूनों का पीला, मटमैला रंग देखकर ही इसका निदान एव परीक्षा की जा सकती है। हाथ और पाँव के दाद के कीटाणुओं को यदि यंत्र-द्वारा देखना हो, तो उस जगह की पपड़ी को लेकर देखने के पूर्व, उसे लाइकर पुटेशी (Liquar Potassae) नामक दवा में एक घण्टे तक भिगो लेना चाहिये।

इलाज

खोपड़ी का दाद जो प्रायः बच्चों के सिर में होता है, चौदह-पन्द्रह वर्ष की अवस्था तक स्वयं ही चला जाता है। परन्तु इस विश्वास पर भी नहीं रहना चाहिये कि बचपन में पैदा हुआ सिर का दाद चौदह-पन्द्रह वर्ष की उम्र में आप-ही-आप आराम हो जायगा, बल्कि इलाज करना चाहिये। खोपड़ी के दाद के इलाज में धैर्य और समय की आवश्यकता है। बच्चों की खोपड़ी के दाद का इलाज साधारणतया करते रहना चाहिये; इससे लाभ होगा। बड़े आदमियों की खोपड़ी का दाद मुश्किल से हटाया जासकता है। यह एक सिद्धान्त है कि जब एक रोग का निदान अच्छी तरह हो जाय, तो उसका इलाज सहज, सुगम हो जाता है; परन्तु खोपड़ी और नाखूनों के दाद के इलाज में ऐसा नहीं होता। जब नाखूनों में दाद हो जाता है तब वह बड़ी ही कठिनता से अच्छा होता है। ठुड्डी और खोपड़ी तथा हाथ के दाद अच्छे उपचार-द्वारा डेढ़-दो महीने में अच्छे हो जाते हैं, परन्तु नाखूनो में जमा हुआ दाद बड़ी ही कठिनता से हटाया जा सकता है। नाखूनों के दाद का कीटाणु-परीक्षकों की प्रयोग-शाला (Laboratory) में बड़ी मुश्किल से मारा जा सकता है। इलाज के समय भी बड़ी ही कठिनाई से इसके कीटाणुओ को काबू में लाया जा सकता है। अतएव यह दाद भयानक है।

वालोंवाले स्थानपर का दाद उस स्थान के दाद की अपेक्षा देर से आराम होता है, जहाँ कि वाल नहीं होते। बिना वालवाले स्थान का दाद छः से दस दिनों के भीतर ही दवा के द्वारा हटाया जा सकता है, किन्तु वालवाले स्थान के दाद को हटाने में छ. से दस सप्ताह का समय लग जाता है।

शरीरपर का दाद—शरीर से हमारा मतलव ऐसे स्थान से है, जहाँ वड़े वाल न हों। ऐसे स्थान के दाद के वीजाणु, त्वचा के ऊपरी हिस्से में ही रहते हैं, इसलिये उनपर विजय प्राप्त करलेना सहज है। दाद के कीटाणुओं को नष्ट करनेवाला कोई भी मलहम, जैसे हाइड्राजेरी आयन्टमेण्ट (Hydrargery Ointment) जो पारे आदि से वनता है, इस दाद को मिटाने के लिए काफी होता है, किन्तु इस वात का ध्यान रखना चाहिये कि उक्त मलहम विला नागा दादपर लगाया जाय। वहुत तेज लगनेवाली दवा की दाद के लिए जरूरत नहीं—तेज दवा सर्वथा हानिकारक सिद्ध हुई है। दाद के कीटाणुओं को नष्ट करने के लिए तेज दवा की जरूरत नहीं है। तेज दवा के लगाने से उस जगह खुजली ज्याद हो जाती है। केवल टिंचरआयडिन (Tincture Iodine) ही लगातार दादपर लगाते रहने से दाद के कीटाणु मर जाते हैं; और साथ ही त्वचा भी उसके प्रयोग से ऐसी वन जाती है, जिसमें दाद के कीटाणु पनपने तक नहीं पाते।

(१) एसेटिक एसिड (Acetic Acid) दो भाग लिनीमेण्ट आयडिन (Liniment Iodine) एक भाग

दोनों दवाओं को मिलाकर दादपर लगाने से साधारण दाद चला जाता है। इसका अच्छा प्रभाव होता है और आराम भी जल्दी ही हो जाता है। रानों और बगल के दाद में यदि खुजली या जलन ज्याद: हो, तो ऐसी दवाइयाँ लगानी चाहिएँ जो वहाँ की त्वचा मुलायम बनादें तथा ठंडक पहुँचाएँ।

(२) हायड्रेर्जरी अमोनेटा (Hydrargery Ammoniata) एक भाग, वेसलीन (Vaseline) सौ भाग मिलाकर लगाना फायदेमन्द होगा या 'बोरिक आयण्टमेण्ट।'

(३) बोरिक एसिड (Boric Acid) एक भाग, वेसलीन (Vaseline) दस भाग लगाना चाहिये; किन्तु इन सबसे अधिक लाभदायक 'क्राइसारोबिन आयन्टमेण्ट (Chrysarobin Ointment) निम्न प्रकार बनाकर लगाना चाहिये।

(४) क्राइसारोबिन (Chrysyrobin) एक भाग, वेसलीन (Voseline) दस भाग।

इससे फी सैकड़ा पचहत्तर मनुष्यों को आराम होता है। दाद के लिये यह रामबाण है। परन्तु इसमें दोष इतना ही है कि यह कपड़ों को खराब कर देती है, इसलिये इसे लगाने के समय के एक-दो वस्त्र अलग ही रखने चाहिएँ। अथवा इसकी जगह—

(५) एसिड बेंजोएक (Acid Benzoic) छः भाग, एसिड सेल्सिलक (Acid Salicylic) छः भाग, वेसलीन (Vasiline) पचीस भाग, नारियल का तेल सौ भाग, इन चारों चीजों को अच्छी तरह मिलाकर लगाना चाहिये। यह भी सबसे उत्तम दवा है।

खोपड़ी का दाद बड़ी कठिनता से अच्छा होता है; क्योंकि इस जगह बालों की जड़ बहुत गहरी होती है और कीटाणु उनकी जड़ों तक पहुँच जाते हैं। यद्यपि ऐसी दवा को बालों की जड़ों तक पहुँचाना कठिन है, तथापि ऐसी दवा से एक लाभ तो अवश्य होता है कि वह ऊपरी हिस्से के कीटाणुओं को मार डालती है और दाद को आगे बढ़ने से रोकती है। जब किसी बालक के सिर में दाद हो जाय तो सबसे मुख्य बात यह है कि उस जगह के बाल फौरन साफ कर दिये जायँ, जिससे दाद के चकत्ते साफ दिखाई पड़ने लगें। दाद की आरंभिक दशा में ही उसके चारों ओर के बाल उखाड़ दिए जायँ, तो बहुत ही लाभ होता है। ऐसा करने से दाद आगे फैलने नहीं पाएगा, और यदि फैल भी जाय, तो अच्छी तरह जमने नहीं पाएगा।

एक बात का विशेष ध्यान रखने की आवश्यकता है कि बालक के सिर के धोने का ब्रश, तौलिया और टोपी अलग रखी जाय और उस बच्चे को सुलाया भी अलग ही जाय।

नित्य नियम पूर्वक बच्चे के सिर को गरम पानी, साबुन और ब्रश से धो-पोंछकर साफकर देना चाहिये। ऐसा करने से दाद के अनेक जीवाणु नष्ट हो जायँगे। इसके बाद कोई भी जीवाणु नाशक दवा का मलहम, जैसे—मर्करी साल्ट्स् (Mercury Salts) कॉपर सॉल्ट्स् (Copper Salts) रीसर्सिन (Resc-rcın) फार्मेलिन (Formalın) आइडिन (Iodıne) सेलिसिलिक-एसिड (Salıcylıc Acıd) कार्बोलिक-एसिड (Acıd carbolıc) बोरिक-एसिड (Acıd Borıc) वगैर. दूसरी दवाइयाँ प्रयोग की जा सकती हैं। इन्हें किस प्रकार लगाया जाय यह एक चतुर चिकित्सक स्वयं विचार ले। वेसलीन वगैरः में मिलाकर लगाया जा सकता है।

जब कीटाणु बालों की जड़ों तक पहुँच चुकते हैं, तो पानी में घुली हुई दवाओं का वहाँ तक पहुँच सकना असम्भव हो जाता है। केवल मलहम या उक्त दवाओं के बने साबुन ही वहाँ तक अपना कुछ असर कर सकते हैं; परन्तु मलहम, केवल चुपड़ लेने से ही काम नहीं चलेगा; बल्कि उसे अँगुलियों के सहारे मालिश करना चाहिये ताकि मलहम अन्दर तक पहुँच जाय। जितनी अधिक मालिश की जायगी उतनी ही जल्दी दाद चला जायगा। कम-से-कम नित्य पन्द्रह-बीस मिनट सायं-प्रात अवश्य मलना चाहिये।

केवल दवाओं के बने साबुन मुश्किल से ही लाभ पहुँचा सकते

हैं। हाँ, साबुन के साथ मलहम का प्रयोग किया जाय, तो वह विशेष लाभप्रद होगा। मलहम निम्न औषधियों का बना लें।

(६) सल्फर प्रेसीपिटेटम (Sulphur Precipitate) तीन भाग, हैड्रार्जेरी एमोनिएटा (Hydrarg. Ammoniata) तीन भाग, एसिड सेल्सिलिक (Acid Salicylic) दो भाग, वेसलिन (Vaseline) बीस भाग, तीनों दवाओं को वेसलिन मे मिलाकर मलहम तैयार कर लें। अथवा—

(७) हैड्रार्जेरी ओलिएटस (Hydrarg. Oleatus) चार भाग, सेल्सिलिक (Acid Salicylic) एक भाग, वेसलिन (Vaseline) बीस भाग, तीनों को एक दिल करके मलहम बना लें। अथवा—

(८) क्यूपरी ओलिएटस (Oleate of Copper) पाँच भाग, वेसलिन (Vaseline) पंचानवे भाग, इन दोनों को मिलाकर दवा तैयार करलो। उक्त तीनों मलहम लाभदायक हैं। इनमें से किसी को भी तैयार करके नित्य नियमपूर्वक दस मिनट तक दादपर मलना चाहिये; इनसे दाद के कीटाणु नष्ट होकर, दाद जाता रहेगा।

दूसरी विधि दाद से छुटकारा पाने की यह है कि हम त्वचा को इतनी उत्तेजित कर दें कि वह जीवाणुओं को मार डाले, अथवा बाहर निकाल फेंके। सबसे अच्छा उपाय इसके लिये यह है कि—

(९) टिंक्चर आयडिन (Tincture Iodine) लगाया जाय ; परन्तु यह खोपड़ी के दाद के लिये विशेप लाभदायक नहीं है। खोपड़ी के दादपर छाला उठाना अत्यन्त लाभ दिखाता है। अथवा—

(१०) कार्बोलिक एसिड (Acid Carbolic) लगाना भी लाभदायक है। यदि यह न लगाना हो तो—

(११) परक्लोराइड ऑफ मरकरी (Perchloride of Mercury) एक भाग, स्पिरिट (Spirit) को मिलाकर खूब लगाना चाहिये। उक्त दोनों दवाएँ भी लाभ करती हैं ; परन्तु ये बालों की जड़ के अन्तिम छोर तक पहुँचकर दाद के कीटाणुओं को मारने में असमर्थ हैं।

क्राइसारोबिन (Chrysarobin) दाद के लिए यद्यपि एक अत्यन्त शत्रु का काम करती है, तथापि इसे सिरपर लगाने में बड़ी सावधानी की जरूरत है ; क्योंकि यदि यह चेहरे पर लग गई, तो वहाँ सूजन हो जायगी और आँखों में लग गई, तो आँखें दुखने लग जायँगी। 'अना' नामक एक प्रसिद्ध अँग्रेज चिकित्सक सिरपर पाँच फी सदी क्राइसारोबिन का मलहम लगाता है, और चेहरे को बचाने के लिए जिलेटिन की झिल्ली से ढाँक देता है। सबसे अच्छा उपाय इसके प्रयोग का यह है—

(१२) क्राइसारोबिन (Chrysarobin) दो भाग, वेक्स

(Wax) अर्थात् मोम दो भाग, लेनोलिन (Lanoline) अर्थात् भेड़ की चर्बी पाँच भाग ; इन्हें आगपर रखकर पिघलाएँ और लम्बी-लम्बी गोल-गोल सलाइयाँ बनाली जायँ । इन सलाइयों को वक्त जरूरत दादपर लगाया जाय ।

(१३) क्राइसारोबिन आइण्टमेंट (Crysarobine Ointment) तीन-चार दिन तक लगाकर जैतून के तेल (Olive Oil) से धो डालें । फिर तीन-चार दिन कुछ भी दवा न लगाएँ, योंही रहने दें । बाद में कोई-सी दवा लगाएँ । कई चिकित्सक जमालगोटे (Croton Oil) का तेल भी लगाते हैं, परन्तु यह बहुत ही तेज और खतरनाक होता है । इसे विशेष सावधानी से प्रयोग करने की आवश्यकता है । योग्य चिकित्सक के द्वारा ही इसका प्रयोग ठीक होता है ।

साधारणतया बालों को जड़ से उखाड़ डालना ही दाद के इलाज में अत्यन्त लाभदायक है, परन्तु बालों को उखाड़ते समय प्राय वे जड़ से न उखड़कर टूट जाया करते हैं । इसलिए यदि बालों को उखाड़ा जाय, तो जड़ से ही उखाड़ें, अन्यथा कुछ भी लाभ नहीं होता ।

दाद का सबसे उत्तम और अच्छा उपाय एक्सरेज (X Rays) है, परन्तु यह भी भय-पूर्ण है । इसमें दाद का हिस्सा कुछ निश्चित समय तक किरणों के प्रकाश में रखा जाता है । इसमें

इस बात की सावधानी रखनी चाहिये कि एक्सरेज की नलिका (Tube) उस भागपर रोशनी बराबर डाल सके। इसका परिणाम यह होता है कि उस जगह के बाल दो या तीन हफ्ते में स्वयं गिरने लगते हैं और सिर गंजे-सरीखा हो जाता है। एक्सरेज-प्रयोग के बाद सिर को खूब अच्छी तरह धोना चाहिये अथवा किसी ब्रश या खुरदुरे कपड़े से रगड़कर कोई कीटाणुनाशक मलहम की मालिश करनी चाहिये, ताकि बचे-खुचे कीटाणु भी नष्ट हो जायँ।

कभी-कभी देखा गया है कि एक्सरेज भी लाभ नहीं पहुँचाता, विशेषत: जब कि छोटे-छोटे दादों से बना हुआ एक चकत्ता हो। ऐसी दशा में दाद के नष्ट होने के बजाय वह उल्टा अधिक फैल जाता है। यद्यपि एक्सरेज के विशेषज्ञों के हाथों में यह एक सर्वोत्तम साधन है, और इसके द्वारा अत्यन्त लाभ भी पहुँचाया जा सकता है, तथापि इसे अन्तिम उपचार मान लेना भी भूल है।

एक जवान आदमी की खोपड़ी में प्रकृतिदत्त एक ऐसा गुण है, जिसपर दाद के कीटाणु पनप ही नहीं सकते। जब इस बात का पता लग जाय कि इसका कारण क्या है?—ऐसे कौन से तत्त्व हैं, जो दाद के बीजाणुओं को नष्ट कर देते हैं? तब दाद का इलाज भी सहज ही हो सकेगा। इन बीजाणुओं की वेक्सिन (Vaccienes) के इञ्जेक्शन-द्वारा कई प्रयोग करके देखे गये;

किन्तु अभी तक कोई सन्तोषप्रद परिणाम नहीं निकला, और यह भी अच्छी तरह सिद्ध है कि चेचक (शीतला रोग) की तरह इसका एक वार हो जाना, सारी उम्र के लिए मरीज को छुटकारा (Immunity) नहीं दिलाता। यद्यपि युवक की खोपड़ी में दाद कभी नहीं होता, तथापि यह सिर की Immunity भी वैसी नहीं है, जैसे कि चेचक वगैर में सारे शरीर की होती है। अस्तु अभी इस प्रकार के अन्य प्रयोग भी अनुभव किये जा रहे हैं, किन्तु अभी तक परिणाम कुछ भी नहीं निकला है।

कीरियान—जब शरीर के किसी भागपर कीरियान (Kerion) हो जाय, तो तेज दवाओं का प्रयोग कदापि नहीं करना चाहिये। उनसे बहुत हानि होती है।

(१४) जिंक आक्साइड (Zinc Oxide) एक भाग, वेसलिन (Vaseline) दस भाग मिलाकर मलहम बनालो और लगाओ अथवा केवल आटे की पुल्टिस बनाकर बाँधना चाहिये। इससे खुजली बन्द हो जायगी और पीप छूटकर वह भाग साफ हो जायगा। यदि उसके चारों ओर के बाल उखाड़ डाले जायँ तो और भी अच्छा हो। अगर दाद नष्ट हो जाने के बाद उस जगह बाल आने में देरी मालूम हो, तो उसपर कोई बाल बढ़ानेवाली दवा या तेज दवाइयाँ जैसे तारपीन का तेल (Terpentine) वगैर लगाना चाहिये। ट्राइकोफाइटाइडिस (Trichophy-

tidis) की जाति का दाद भी तब अपने आप अच्छा हो जाता है जब कि उसकी गहरी सूजन अच्छी हो गई हो।

ठुड्डी का दाद—जैसा कि पहले कहा जा चुका है, यह दाद दो प्रकार का होता है। एक तो यह टीनिया सारसिनेटा (Tinea cricinata) की तरह छोटे-छोटे गोल-गोल चकत्तों में वाहरी त्वचा पर फैला होता है, या दूसरी बहुत भयानक शक्ल में छोटे-छोटे उभरे हुए दाने से होते हैं, परन्तु ये दोनों ही किस्म के दाद, हाइड्राजेरी अमोनेटा के मलहम से या किसी भी दूसरे कृमि-नाशक मलहम से अच्छे हो जाते हैं। दाढ़ी के वालों को सिर के वालों की तरह उखाड़ने में कोई कठिनता नहीं होती; क्योंकि यहाँ के वाल जल्दी-जल्दी नहीं टूटते; ये सिर के वालों की अपेक्षा मजबूत होते हैं। इसके अतिरिक्त दाद का हिस्सा भी सीमित होता है, इसलिए बाल बिना कष्ट के सहज ही उखाड़े जा सकते हैं। दाद में के छोटे-छोटे वालों को न उखाड़कर जब वे बड़े हो जायँ, तब उखाड़ना चाहिये और बाद में उसपर कोई-सा मलहम लगा देना चाहिये। नीचे लिखा हुआ मलहम विशेष लाभदायक होगा।

(१५) ओलिएट ऑफ कॉपर (Oleate of Copper) दस भाग, वेसलिन (Vaseline) सत्तर भाग, इन दोनों को मिलाकर मलहम बना लिया जाय और काम में लाया जाय। यदि यह न बनाना हो, तो फिर, हाइड्राजेरी अमोनेटा का मलहम

ही पर्याप्त होगा। ठुड्डी के दादपर एक्सरेज (X Rays) के प्रयोग की आवश्यकता नहीं होती।

हथेली और पाँव के तलवों का दाद—हाथ और पाँव के दाद बड़ी मुश्किल से अच्छे होते हैं; इसलिये मरीज को बड़े धैर्य के साथ बहुत दिनों तक इलाज करना चाहिये, क्योंकि कभी-कभी देखने में ऐसा मालूम होता है कि दाद बिलकुल अच्छा हो गया; किन्तु वास्तव में वह अच्छा नहीं होता और फिर उभर आता है। "हाइड्रार्जेरी अमोनेटा" मलहम इसके लिये सबसे अच्छी दवा है। अगर दाद अच्छा होता नजर न आए, तो दवा को घटा-बढ़ा कर तेज करलेना चाहिये। नीचे लिखे लोशन से धोना और उस जगह निम्नलिखित मलहम लगाना भी विशेष हितकर है।

(१६) पोटाश परमेंगनेट (Potas Permanganate) एक भाग, पानी (उबला हुआ) पाँच सौ भाग, दोनों को मिला देने से 'लोशन' तैयार हो जायगा। बाद में निम्नांकित मलहम बनाकर लगा दो।

(१७) पिकरिक एसिड (Picric Acid) दो भाग, वेसलिन (Vaseline) दस भाग, दोनों को अच्छी तरह मिला देने से मलहम तैयार हो जायगा। यदि मलहम न बनाना हो, तो निम्न-विधि से लोशन बना लें।

(१८) पिकरिक एसिड (Picric Acid) एक भाग,

स्प्रिट (Spirit) पाँच भाग, दोनों को एक शीशी में डाल दो, दवा तैयार हो जायगी। अगर तेज बनाना हो, तो स्पिरिट तीन भाग या चार भाग कर लेना चाहिये। यहाँ हम पुन. यह याद दिला देना आवश्यक समझते हैं कि दाद के आराम हो जानेपर भी हफ्तों तक कोई-सा कीटाणु नाशक मलहम उस जगह प्रात.-सायं मलते रहना चाहिये। यदि हो सके, तो सोते समय दस्ताना या जुर्राब पहन लेना चाहिये।

नाखून का दाद—नाखून का दाद इतना बुरा रोग है कि ईश्वर शत्रु को भी यह रोग न दे। यह एक ऐसी जमनेवाली बीमारी है कि कठिनता से पिंड छोड़ती है, बल्कि कभी-कभी तो लाख प्रयत्न करने पर भी अच्छी नहीं होती और यदि इलाज करने में शिथिलता की, तो आमरण नहीं जाती। कारण यह है कि इसके कीटाणु नाखून के भीतर होते हैं, जिससे कोई भी दवा वहाँ तक पहुँचकर उन्हें नहीं मार सकती। सिर के दाद में हम एक्स-किरणों-द्वारा वहाँ के बाल उड़ा सकते हैं, दाढ़ी के बाल उखाड़ सकते हैं, किन्तु नाखून के दाद के लिये अभी कोई भी ऐसा यंत्र या उपाय नहीं उपलब्ध हुआ है, जो नाखूनों के नीचे छिपे बैठे दाद के कीटाणुओं को मार सके।

कई चिकित्सक ऐसे रोगी को बेहोश करके नाखून को चीर देते हैं या उखाड़ फेंकते हैं; परन्तु यह उपाय कुछ ठीक नहीं सिद्ध

हुआ, सफलता वहुत ही कम मिली। इसके लिए प्रथम तो मरीज ही नहीं तैयार होता और यदि हिम्मत बाँधकर तैयार हो भी गया, तो उसे तकलीफ विशेष होती है। नाखून के दाद पर दवा लगाने से पूर्व एक काँच के टुकड़े से या रेती से नाखून को रगड़ लिया जाय अर्थात् छील दिया जाय और वाद में उसपर कोई कीटाणुनाशक दवा लगा दी जाय। आइडिन (Iodine), मरकरी परक्लोराइड (Mercury Perchloride), पेरेगेलिक एसिड (Acid Pyrogallic), सेलिसलिक (Salicylic), पिकरिक एसिड (Acid Picric) या सोडियम थियोसल्फेट (Sodium thio sulphate) का सोल्यूशन (Solution) वनाकर भी प्रयोग किया जा सकता है, परन्तु वात यह है कि मरीज ऐसे दिनी इलाज से घवराकर थोड़ा-सा आराम होते ही दवा वन्द कर देता है। परिणाम यह होता है कि दो-तीन महीने वाद फिर दाद प्रकट हो जाता है।

"हेरिसन मेथड" के निम्नलिखित दो सोल्यूशन नाखून के दादों पर हितकर हैं। इन्हें प्रयोग करके देखना चाहिये।

(१९) लाइकरपुटेशी (Liqr Potassae)	½ औंस १५ ग्रेन
एकुआ डिस्टिल (Aqua Distil)	½ ,, १५ ,,
पोटाश आयोडाइड (Potas Iodide)	१ ड्राम ५ ,,

इसे तैयार करलें और साथ ही.—

(२०) हाइड्रार्जरी परक्लोराइड (Hydrargery Perchloride) चार ग्रेन तीन प्वाइंट, स्पिरिट (Spirit) आवश्यकतानुसार, एकुआ डिस्टिलेटा (Aqua Distilatta) ½ औंस १५ ग्रेन; इसे भी बनालें। अब नं० १८ को एक खुरदरे कपड़े पर लगा कर दाद के स्थान पर चिपका दें और किसी मोमजामे के कपड़े से ढाँक दें। पन्द्रह मिनट बाद इसे हटालें और न० १९ के लोशन में एक दूसरा टुकड़ा तर करके वहाँ लगादें। इसे चौबीस घण्टे तक लगा रहने दें। ऐसा करने का फल यह होगा कि 'आयोडाइड' (Iodide), लाइकरपुटेशी (Liqr-Potassae) में हल होकर नाखून को नर्म करके दूर तक अपना प्रभाव करेगा, और पारे से मिलकर, वह सिन्दूर बनाता है, जो दाद के कीटाणुओं को नष्ट कर देता है। यह उपाय खोपड़ी के दाद के लिये भी किया जा सकता है; परन्तु यह अत्यन्त कष्टप्रद होता है।

अनेक अनुभव के पश्चात् संतोपप्रद उपाय यह निश्चत हुआ है कि दादग्रस्त अँगुली को दूर तक जस्ते के मलहम (Zinc Ointment) से आच्छादित कर दिया जाय, और नाखून पर दवा न लगाई जाय; खुला ही छोड़ दिया जाय। उस नाखून पर एक खादी का टुकड़ा नीचे लिखे लोशन में तर करके लगा दिया जाय, और रबर के दस्ताने से ढाँक दिया जाय।

(२१) कापर सल्फेट (Copper Sulphate) बनहत्तर

ग्रेन, डिस्टिल-वॉटर (Distil-Water) दो ड्राम, चालीस मिनिम, डिस्टिल-वॉटर में कापर सल्फेट मिलाने से यह लोशन तैयार हो जायगा ।

इसका परिणाम यह होगा कि एक दो दिन में नाखून इतना नर्म हो जायगा कि सहज ही में उखाड़ा जा सकता है। बाद में उस जगह कोई भी कीटाणुनाशक दवा लगाकर दाद को सहज ही नष्ट किया जा सकता है। यह तरीका सबसे सुगम और उत्तम है ।

दाद के लिए कुछ और अँग्रेजी नुस्खे

अब हम यहाँ कुछ ऐसे नुस्खे भी पाठकों के लाभार्थ लिख देना चाहते हैं, जो अक्सर दादपर लाभदायक होते हैं। बाजारों में इन्हीं नुस्खों के विविध नाम रखकर खूबसूरत डिब्बियों में या शीशियों में बन्द करके बेचा जाता है। पाठक स्वयं बनाकर फायदा उठा सकते हैं।

(२२) सल्फरिक एसिड (Sulpharic Acid) एक भाग, नाइट्रिक एसिड (Nitric) एक भाग, पीतल का बुरादा दो भाग, तीनों को मिलाने पर दवा तैयार हो जायगी। इसे चौबीस घण्टे रख छोड़ें। बाद में दाद पर लगाने से छाला अवश्य होगा; किन्तु दाद जाता रहेगा ।

(२३) आइण्टमेण्ट ऑफ सल्फर (Sulphur Ointment) तीन ड्राम, केलोमेल (Celomel) एक ड्राम, क्रियोसूट (Creosote) आधा ड्राम, गोआ पाउडर (Goa Powder) एक ड्राम, इन चारों दवाओं को मिलाकर रख लो। वक्त जरूरत दादपर लगाओ, अवश्य लाभ होगा।

(२४) एसिड क्राइसोफोनिक (Acid Chrysophonic) पन्द्रह ग्रेन, वेक्स (Wax) तीन माशे, तिल का तेल नौ माशे, सुहागा भुना हुआ तीन माशे, इन सबको मिलाकर रख लो। पहले तेल में वेक्स (मोम) गर्म करके मिला दो, बाद में दूसरी दवाएँ डालकर, मलहम बना लो। दादपर लगाने से दाद चला जायगा।

(२५) लेमनज्यूस (Lemon Juce) चौदह ड्राम, गोआ-पाउडर (Goa Powder) दो ड्राम; दोनों को मिलाकर रख दो। यह एक लोशन तैयार हो जायगा। दादपर लगाकर इसे खूब मलना चाहिये; दाद नष्ट हो जायगा।

(२६) गोआ पाउडर (Goa Powder) आधा औंस, गंधक आँवलासार दो ड्राम, सुहागा तीन ड्राम, इन सबको बारीक पीसकर शीशी में भर दो। यह एक पेटेण्ट दवा है। बाजारों में खूब बिकती है। दाद को नष्ट करती है। इसे पानी, मिट्टी के तेल या नीबू के रस में घोलकर दादपर लगाना चाहिये।

(२७) बोरिक-एसिड (Boric Acid) डेढ ड्राम, एसिड क्राइसोफोनिक (Acid Chrysophonic) बारह ग्रेन, ऑइल ऑफ रोज (Oil of Rose) पाँच बूँद, इन्हें खरल करलो और पावभर तिल-तैल में मिलाकर दाद की जगह मालिश करो। दवा लगाने से पूर्व कार्बोलिक साबुन से धो डालना चाहिये।

(२८) साधारण साबुन बीस तोला, ग्लीसरीन (Glycerine) दो तोले, तीन मारो, कार्बोलिक एसिड (Acid Carbolic) एक औंस, रंग चाहे जैसा मिलालो और टिकली बनाकर रखलो। दाद के स्थान को इस साबुन से धोने से बहुत लाभ होता है।

प्राकृतिक-चिकित्सा

'प्राकृतिक चिकित्सा' हमारे देश की अति प्राचीन चिकित्सा है। वेद से इन चिकित्साओं से सम्बन्ध रखनेवाले अनेक मंत्र पाये जाते हैं। वेद और वैद्यक में अन्तर है; क्योंकि वैद्यक में द्रव्य-चिकित्सा मुख्य और अन्य चिकित्साएँ गौण हैं; किन्तु वेद में मानसिक-चिकित्सा और प्राकृतिक-चिकित्सा मुख्य तथा द्रव्य-चिकित्सा गौण है। वेद स्वावलम्बन का उपदेश देता है, तो वैद्यक परावलम्बन का।

कुछ लोगों का खयाल है कि बिना दवा के रोग नहीं हटाया जा सकता; किन्तु यह भूल है। हमारे ऋषि-मुनि वैद्यक-चिकित्सा-प्रणाली के विरुद्ध थे और वे उसे घृणा की दृष्टि से देखते थे। आजकल भी लोग अब उसी प्राचीन सिद्धान्त का समर्थन करने लगे हैं। जर्मनी के प्रसिद्ध डाक्टर लूईकूने ने लिखा है—"आधुनिक चिकित्साशास्त्र एक दयनीय-विज्ञान (Pitiable-Science) है। डाक्टर वेली (लन्दन) ने लिखा है—

"I have no faith whatever in medicine."

अर्थात—दवाओं पर मेरा किञ्चित् भी विश्वास नहीं है। डा० जेम्स जान्सन एम० डी० एफ० आर० एस० "मेडिकोचिरर्जीकल" के सम्पादक का कहना है कि—

"I declare as my conscientious conviction, founded in long experience, that if there was not a single physicion, surgeon, man-midwife etc:. there would be less sickness and less mortality, than now prevail"

अर्थात्—बहुत दिनों के अनुभव के पश्चात् मुझे यह विश्वास हो गया है कि यदि एक भी डाक्टर, सर्जन, स्त्री-चिकित्सक वगैरः न हो, तो रोग और मृत्यु उतनी नहीं होती, जितनी की आजकल होती है।

"Medicine can give no body goodspirits"
A. M Hutchison M. D.

अर्थात्—किसी भी मनुष्य को औषधि-द्वारा जीवन और शक्ति नहीं मिलती।

डा० फ्रांसिस गॉस्स ने तो यहाँ तक लिखा है कि—"It cannot answer to any conscience to withheld the acknowledgement of my firm belief, that the medical profession is productive of vastly more evils than good, and were it absolutely abolished, mankind would be infinitely the gainer."

अर्थात्—"मेरा पूर्ण विश्वास है कि वर्त्तमान चिकित्सा-पद्धति ने लाभ के स्थान पर हानि ही अधिक पहुँचाई है। यदि इस चिकित्सा प्रणाली का नाश हो जाय, तो मानवजाति पर एक महान उपकार होगा।" तात्पर्य यह है कि प्राचीन और आधुनिक विद्वान वैद्यक शास्त्र को अपूर्ण ही मानते हैं और औषधि-चिकित्सा को सदोष मानते हैं। अतएव इस विचार-रक्षा के लिए हम यहाँ प्राकृतिक-चिकित्सा-प्रेमियों के लिए कुछ प्राकृतिक चिकित्साओं को लिखना अपना कर्त्तव्य समझते हैं।

वेदों ने भी रोगों के कीटाणुओं का अस्तित्व माना है, वर्त्तमान वैज्ञानिकों की ही खोज हो, सो नहीं। देखिये—

"अन्वान्त्र्यं शीर्षण्यमथो पार्ष्टेयं क्रिमीन् ।
अवस्कवं व्यध्वरं क्रिमीन् वचसा जम्भयामसि ।"

अथर्व २।३१।४

आँतों में के, सिर में के, पसलियो में के, नीचे-नीचे रेंगने-वाले और पीड़ा देनेवाले उन सब कीटाणुओं को वाणी से नष्ट करें।

अर्थात्—प्रत्येक रोग के कीटाणु होते हैं और उन्हीं के नाश होने पर रोग-नाश होता है। प्राकृतिक-चिकित्सा-द्वारा भी रोग-कीटाणुओं को नष्ट किया जाता है।

पाश्चात्य-चिकित्सक बीमारियों के कीटाणुओं से बड़े ही परे-शान हैं। उन्हे नाश करने के लिये जहरीले पदार्थों को शरीर में पहुँचाते हैं। परिणाम यह होता है कि रोग-कीटाणुओं को नष्ट करने के साथ-ही-साथ, वे जहरीले पदार्थ शरीर के कई ऐसे आव-श्यक तत्वो को जो जीवनाधार होते हैं—दूपित—विषाक्त कर देते हैं। अभी तक कोई ऐसी दवा डाक्टरी-संसार मे आविष्कृत नहीं हैं, जो शरीर में पहुँचाने पर उन सेलों (Cells) को नष्ट न करे, जो कि जीवन के लिए आवश्यक हैं। सभी औषधोपचार चाहे वह इञ्जेक्शन द्वारा हो या खाने-पीने की दवा से हो, हमारे शरीर में विषयुक्त पदार्थ पहुँचाते हैं, जो जीवनाधार सेलों को नष्ट कर डालते हैं। इससे हमारे जीवन का ह्रास होता है। औषधरूपी

विष हमारे शरीर में जाकर शरीरस्थ धातुओं को दूषित करता है, परिणाम यह हो रहा है कि हमारी धारणा-शक्ति दिन-प्रति-दिन कम होती जा रही है। इन जहरीले पदार्थों को शरीर में पहुँचा देने से सब रोग-कीटाणु नहीं मर जाते; क्योंकि कीटाणु ऐसे स्थानों में भी रह सकते हैं, जहाँ रक्त का नाम नहीं है। यही कारण है कि ऐसे जहरीले पदार्थों से रोग कुछ समय के लिए दब जाता है। जड से नहीं जाता; क्योंकि इनका काम रोग-कीटाणुओं को नष्ट करना है, न कि शरीर के मल को हटाना। यही कारण है कि हमारे प्राचीन महर्षियों ने इन रोग-कीटाणुओं को जानते हुए भी इनकी ओर ध्यान ही नहीं दिया। उन पूर्वजों ने हमें ऐसे उपाय बताए हैं, जिनसे हमारे शरीर में रोगोत्पादक बीजाणुओं की उत्पत्ति ही नहीं हो सकती। अब यहाँ हम ऐसी ही कुछ प्राकृतिक-चिकित्साओं के सम्बन्ध में विचार करेंगे।

मानसिक-चिकित्सा

मानसिक शक्ति का वर्णन यदि यहाँ लिखने बैठें, तो एक अलग ही पुस्तक तैयार हो जाय। इसलिए हम यहाँ मन शक्ति का विशद वर्णन करना ठीक नहीं समझते। मानसिक शक्ति एक महान शक्ति है, इसी लिए वेद ने कहा है—

"तन्मेमनः शिवसंकल्पमस्तु ।"

मेरा मन पवित्र उत्तम विचारवाला हो। इस छोटे से वाक्य में सब कुछ निहित है। गागर में सागर का समावेश है। मन के अधीन ही सब शरीर है। यह एक मानी हुई बात है कि जब तक मन बलवान है, कोई रोग पास नहीं फटकने पाता। मन की निर्बलता ही बीमारी का कारण बनती है; अतएव प्रत्येक रोगी की मानसिक-चिकित्सा सबसे पहले होना आवश्यक है। इस विषय में एक सूक्ष्मदर्शी अमेरिकन डाक्टर एग्जिब एमिल गिब्सन ने लिखा है.—

"In the heroic days of the Veda-writers, the Physician of the body was also the physician of the mind"

अर्थात्—वैदिक-काल में एक चिकित्सक मन का चिकित्सक भी होता था। वेद यद्यपि औषधि-चिकित्सा बता रहा है; परन्तु उसका सब आकर्षण सूक्ष्म मानस-चिकित्सा आदि पर ही है। वेद ने जितना इस चिकित्सा पर जोर दिया है, उतना किसी पर भी नहीं है। इसमें किसी पर अवलम्बित रहने की आवश्यकता ही नहीं है। केवल स्वावलम्बन की जरूरत है। वेद मानव जाति को स्वतंत्रता का पाठ पढ़ाता है, और परतंत्रता से घृणा कराता है।

मानस-चिकित्सा में किसी वाह्य साधन की जरूरत नहीं है। यह चिकित्सा अपने आत्मिक वल और मन की इच्छा-शक्ति से ही होती है। यदि रोगी में मनोबल उत्पन्न हुआ या किसी चिकित्सक ने उत्पन्न कर दिया तो, रोग का नाश होने लगता है। वेद कहता है—

"यज्ज्योतिरन्तरऽमृतं प्रजासु।"

अर्थात्—मन प्राणियों के अन्दर अमृत के समान है। कहिये, जब अमृत तुल्य मन आपके भीतर मौजूद है, तब बीमारियाँ कैसी? बात यह है कि मानसिक अमृतशक्ति को आपने इतना निर्बल कर दिया है कि रोग पैदा होने लगे और रोग निवारणार्थ अमृत को प्राप्त न कर प्यासे मृग की भाँति ग्रीष्म-मरीचिका सदृश औषधियों की ओर लपके। वेद ने मन की शक्ति को महान् माना है, और कहता है—

"यस्मान्नऋते किञ्चन्कर्म क्रियते।"

अर्थात्—मन के बिना कोई भी काम नहीं किया जा सकता।

"येन यज्ञस्तायते सप्तहोता।"

अर्थत्—मन के द्वारा सप्तहोता यज्ञ फैलाया जाता है। इस यज्ञ के दो आँखें, दो नाक, दो कान और एक मुँह, ये सात, यज्ञहोता और मन ब्रह्मा है। यह मन—

"सुषारथिरश्वानिव०—"

मनुष्यों को उस प्रकार चलाता है, जिस तरह कुशल सारथी रथ के घोड़ों को। सारांश यह कि मन. शक्ति एक प्रबल शक्ति है। अतएव मानसिक-चिकित्सा सर्वश्रेष्ठ चिकित्सा है। अस्तु।

मन की अनेक वृत्तियाँ हैं। भिन्न-भिन्न वृत्ति के परिणाम भी भिन्न ही होने चाहिएँ। योगशास्त्र मे इन वृत्तियों की सिद्धि का खूब वर्णन है। मन की एक वृत्ति ऐसी है, जिसका परिणाम शरीर पर होता है। इसके दो भेद माने गए हैं (१) भद्र और (२) अभद्र। भद्र का परिणाम उत्तम और अभद्र का निकृष्ट होता है। इस वृत्ति को बलवती बनाने से रोगकीटाणुओं का नाश हो जाता है। यदि कोई यह समझे कि यह चिकित्सा कष्टसाध्य है और योगाभ्यास के बिना नहीं हो सकती, तो वह भूल करता है। इस मानस-चिकित्सा-द्वारा साधारण मनुष्य भी लाभ प्राप्त कर सकता है। आप वचनों-द्वारा प्रेरणा करें, यदि कोई परिणाम दिखाई न दे, तो उसकी वृत्ति पलट दें, अवश्य परिणाम होगा। इस चिकित्सा के लिए मन. शक्ति को बलवती बनाना आवश्यक है, फिर उसके द्वारा दाद जैसे रोगों को शीघ्र ही नष्ट किया जा सकता है।

योगचिकित्सा

योगचिकित्सा में रोगी को स्वस्थ होने के लिए इस पर पूर्ण विश्वास रखना चाहिये। सन्देह हानिकारक है। मन को शांत रखे, चिकित्सा के समय चुपचाप शुभ-कामना-युक्त मन रखे। उसे शिथिल अंग होकर बैठ जाना चाहिये और यह विचार करता रहे कि मुझे आराम हो रहा है।

चिकित्सा इतनी पवित्र और धार्मिक हो कि रोगी को किसी प्रकार की अश्रद्धा पैदा ही न हो। प्राणायाम का पूरा पंडित हो। इच्छाशक्ति का ज्ञाता हो। इच्छाशक्ति के विज्ञान का उसे पूरा पता हो। संशयपूर्ण मन न हो। कम सोनेवाला, कम बोलनेवाला, कम मेह-नत करनेवाला और सादा, हलका तथा उचित भोजन करनेवाला हो।

योगचिकित्सा का आधार प्राण, इच्छा शक्ति और विचार संयम है। यौगिक भाषा में, स्थापक और निषेधक प्राण की विषमता ही रोग का कारण माना है। जब तक ये दोनों प्राण अपने-अपने स्थानों में सम अवस्था में रहते हैं तथा कोई बाधा नहीं होती, तभी तक मनुष्य नीरोग रहता है, इनके कम-बढ़ होने से ही कष्ट और रोग पैदा होते हैं। स्थापक प्राण की अधिकता के लक्षण; गर्मी, जलन, बेचैनी, दर्द इत्यादि हैं और निषेधक प्राण की वृद्धि के लक्षण, बेहोशी, सर्दी, भारीपन, आलस्य, अकड़न वगैर हैं।

यहाँ यह जान लेने की जरूरत है कि स्थापक प्राण, स्थापक प्राण को और निपेधक, निपेधक प्राण को हटाता है। यदि एक दूसरे के विपरीत हुए तो, उनमें युद्ध होता है, एक दूसरे को परास्त करने की चेष्टा करता है। दाहिने हाथ और उसकी अँगुलियों से जो प्राणशक्ति निकलती है वह स्थापक है। यह शीतल, आराम देनेवाली, दूसरी वस्तु में प्रवेश करनेवाली, और स्थापक प्राण को धक्का देकर पीछे हटानेवाली है। इसका रंग हलका नीला है।

बाएँ, हाथ की हथेली और उसकी अँगुलियों के अग्रभाग से जो प्राणशक्ति निकलती है वह 'निपेधक' है। वह गर्मी पहुँचाता है। उसका रंग हलका लाल है। दाहिने हाथ के प्राण का वेग बाहर से अन्दर की ओर है; और बाएँ हाथ के प्राण का वेग अन्दर से बाहर की ओर है। अर्थात्—यदि किसी के शरीर पर दाहिना हाथ रखा जाय, तो उस हाथ की प्राणशक्ति दूसरे मनुष्य में प्रवेश करेगी। इसी प्रकार यदि बाएँ हाथ को दूसरे के शरीर पर रखा जाय, तो उसके शरीर की प्राणशक्ति को खींचकर ऊपर से नीचे और अन्दर से बाहर ले आयेगी। सारांश यह कि यदि स्थापक प्राण की अधिकता से रोग हुआ हो, तो रोग से पीड़ित स्थान पर अपना दाहिना हाथ रखकर अपनी स्थापक प्राणशक्ति उसमें प्रविष्ट करो। ऐसा करने से वहाँ पर वह स्थापक प्राण जो इकट्ठा हो गया है, पीछे हट जायगा। उस अंग के दूसरे तरफ

अपना वायाँ हाथ लगा रखो ताकि उसकी आकर्षणशक्ति से वह स्थापक प्राण वाहर हो जाय । ऐसा करने से रोग नष्ट हो जायगा। यदि रोग, निषेधक प्राण की अधिकता से उत्पन्न हुआ हो, तो वाएँ हाथ की प्राणशक्ति पहुँचाकर उसे हटा दो। दाद स्थापक प्राण की अधिकता से उत्पन्न होनेवाला रोग है, इसलिए दाहिने हाथ के स्पर्श-द्वारा और वाएँ हाथ को उस स्थान के दूसरी ओर लगाकर इस चिकित्सा के करने से दाद को लाभ होगा। चिकित्सक को इसके लिए वड़े अभ्यास और नियमपूर्वक रहने की आवश्यकता है।

वायु-चिकित्सा

प्राणियों के लिये सबसे पहली और आवश्यक खूराक हवा है। अन्न-जल आदि के विना, तो दिनों तक जीवित रहा जा सकता है; किन्तु हवा के विना तो कुछ मिनटों में ही मृत्यु हो जाती है। सारांश कि हवा जीवन के लिए एक सर्वप्रथम आवश्यक वस्तु है। यदि शुद्ध वायु का सेवन किया जाय और दूषित वायु से वचा जाय, तो शरीर में कोई रोग ही नहीं होगा। ऋग्वेद में लिखा है—

"आत्मादेवानां भुवनस्य गर्भो यथावशं चरतिदेवएष. ।
घोषाइदस्य शृण्विरे न रूपं तस्मैवातायहविषाविधेम । "
१०।१६८।४

अर्थात्—वायु सब इन्द्रियों का प्राण है। सब प्राणियों का आधार है। इसकी, हवन से पवित्रता करनी चाहिये। शुद्ध वायु का सेवन सब रोगों का नाश करता है, और वायु की शुद्धि हवन-द्वारा होती है। अर्थात्—जिन घरो में नित्य हवन होता है, उनमें की वायु शुद्ध होती रहती है। जर्मनी के प्रसिद्ध चिकित्सक डा० ए० जूस्ट ने जंगवार्न ह्विला (Jungborn Villa) नामक मकान में भयंकर रोगों से ग्रस्त मनुष्यों को केवल स्वच्छ विपुल हवा और सूर्य-प्रकाश में रखकर स्वस्थ कर दिया। वेद कहता है—

" वात आवातभेषजं शंभुमयोभुवोहृदे ।
प्रण आयूंपितारिषत् ॥ १ ॥
उतवात पिताऽसिन उतभ्रातोतन' सखा ।
सनो जीवातवेकृधि ॥ २ ॥
यददोवाततें गृहऽमृतस्य निधिर्हित ।
ततो नोदेहिजीवसे ॥ ३ ॥ ऋग्वेद १०।१८६

अर्थात्—वायु औषधि है, वह आरोग्यता देनेवाला है, हृदय को प्रसन्न करता है। दीर्घायु प्रदान करता है, वह पिता-भाई

और मित्र के समान हमारा हितैषी है। उसमें अमृत है, वह हम प्राप्त करें। जो अमृत का कोष है उसके सेवन से रोगों का होना ही असंभव है।

" आवातवाहिभेषजं दिवातवाहियद्रनय'।
त्वंहिविश्वभेषजो देवानां दूतइयसे॥" ऋ० १०।१३७

अर्थ—वायुदेव ! तुम अपनी दवा लाओ और हमारे सब दोषों का हरण करो, क्योंकि तू सब औषधियों से युक्त है। दाद हटाने के लिए शुद्ध वायु में निवास करना आवश्यक है। भीतर की शुद्धि के लिए प्राणायाम भी अत्यावश्यक है। प्राणायाम की विधि संक्षेप में यह है—"पालथी मारकर शुद्ध वायु में बैठ जाओ, दाहिने नथुने को अंगुली से दबाओ और धीरे-धीरे साँस ऊपर की ओर खींचो। प्राण खींचते समय गुदा मार्ग को भी साथ में खीचकर ऊपर ही सिकोड़े रहो। जितना समय प्राण अन्दर खींचने में लगा हो, उससे चौगुने समय तक अन्दर ही रोके रहो। इस समय पेट को आगे की ओर न फुलाकर अन्दर की ओर खींचो। अब जिस नथुने मे हवा खींची थी उसे दबाकर धीरे-धीरे हवा छोड़ दो। जितना समय खींचने में लगा हो, उससे दुगुना छोड़ने में लगाओ। हवा छोड़ते समय कंठ को सिकोड़ना चाहिये। समय का प्रमाण गिनती गिनकर या घड़ी देखकर किया जा सकता है।" यह प्राणायाम की विधि है। इस प्रकार कई बार

करने से, रक्त शुद्ध होकर दाद की बीमारी धीरे-धीरे चली जायगी। कम-से-कम सौ-पचास प्राणायाम नित्य नियमित विधि-पूर्वक करना चाहिये।

दाद के रोगी को खुली शुद्ध हवा में, हवा के बहाव की ओर दाद को करके खूब बैठना चाहिये। इससे दाद को लाभ होगा और वह आगे नहीं फैलने पाएगा। वायु-चिकित्सा को धैर्यपूर्वक करने की आवश्यकता है; क्योंकि इसके द्वारा तत्काल लाभ होता नहीं दिखाई देगा। दवा की भाँति दो-चार दिनों के प्रयोग से कुछ भी नहीं होगा। महीनों की आवश्यकता है।

जल-चिकित्सा

'जल-चिकित्सा' आजकल भारत में खूब प्रचलित है। इसके आविष्कारक जर्मनी के डाक्टर लूईकूने माने जाते हैं; परन्तु यह बात नहीं है। जल-चिकित्सा का विधान वेदों मे भी है।

"अप्सु मे सोमो अब्रवीदन्तर्विश्वानिभेषजा।
अग्निंच विश्व शंभुवमापश्च विश्वभेषजी॥"

ऋग्वेद १।२३।२०

अर्थ—सोम ने मुझे कहा कि पानी में संपूर्ण औषधियाँ हैं। पानी ही सब औषधि है और अग्नि स्वास्थ्य का देनेवाला है।

"अप्स्वन्तरमृतं अप्सु भेषजम् ।" ऋग्वेद १।२३।२०

अर्थ—पानी में अमृत है, पानी में औषधि है। वेद जल-चिकित्सा पर कितना जोर दे रहा है, यह नीचे के मंत्र से समझा जा सकता है।

"आप इद्वा उभेषजीरापो अमीवचातनी ।
आप सर्वस्य भेषजीस्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम् ॥" ऋग्वेद

अर्थ—जल निस्सन्देह दवा है, जल वास्तव में रोगों को हटाने वाला है। जल सब रोगों की एक मात्र दवा है, वह जल तुम्हें औषधि हो। अथर्ववेदीय जल-सूक्त के मन्त्रों को हम यहाँ लिखकर पुस्तक का आकार बढ़ाना ठीक नहीं समझते, बल्कि उन मंत्रों के कुछ महत्ता-सूचक वाक्यों को ही लिखेंगे।

"अप्सु अमृतम्"	जल में अमृत है।
"अप्सु भेषजम्"	जल में दवा है।
"शिवतमोरस."	अत्यन्त कल्याण-कारक रस है।
"आप मयोभुव"	जल हितकारक है।
"अप्सुविश्वानिभेषजा ।"	जल में सब औषधियाँ हैं।
"आपः पृणीत भेषजम्"	जल औषधि करता है।
"आपो याचामि भेषजम्"	जल से औषधि माँगता हूँ।
"शंनो देवी रभिष्टय आप भवन्तु"	दिव्य जल हमें शान्तिप्रद हो।
"वरूथं तन्वेमम"	मेरे शरीर का रक्षण जल से हो।

"न ऊर्ज्जेदधातनः" हमें जल पुष्टकरे।

"आपोजनयथाचनः" जल हमें उत्पन्न करता है।

उक्त वाक्य जल की महत्ता का अच्छी तरह वर्णन कर रहे हैं। सारांश कि समस्तरोग एक मात्र जल-चिकित्सा-द्वारा दूर हो सकते हैं। हिन्दी-भाषा में आज जल-चिकित्सा पर अनेक विद्वानों-द्वारा लिखी पुस्तकें प्राप्त हो सकती हैं, यह हर्ष का विषय है। जल के प्राप्त करने में कुछ भी झंझट नहीं; सर्वत्र प्राप्त होता है। दाद के रोगी को चाहिये कि स्नान के समय एक मोटा खुरदरा खादी का कपड़ा जल में भिगो-भिगोकर बारंबार उस दाद को रगड़े। न तो अत्यन्त धीरे ही और न बहुत जोर से ही रगड़ना चाहिये। ऐसा करते समय मन एकाग्र होना चाहिये और यह निश्चय भावना होनी चाहिये कि—"अमृत समान महौषधि जल से मैं अपने दाद को नष्ट करदूँगा।" स्नान करने के पश्चात् उसी वस्त्र को निचोड़कर उससे दाद के स्थान को रगड़कर पोंछ डाले। उस कपड़े को शरीर के अन्य भाग पर न लगाएँ। नित्य दस मिनट तक पानी से रगड़कर स्नान करना आवश्यक है। कपड़े को रोज साबुन से धोकर या गर्म पानी में उबालकर सुखा देना चाहिये।

इस प्रकार नियमपूर्वक जल-चिकित्सा-द्वारा एक-दो महीने में भयानक दाद भी चला जायगा।

अग्नि-चिकित्सा

'अग्नि' रोग-कीटाणु-नाशक है, इस बात को विशेष समझाने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि उसका गुण धर्म ही दग्ध करना है। संस्कृत-भाषा में अग्नि को 'रक्षोहा' भी कहते हैं। रक्षोहा शब्द का अर्थ है—राक्षसों को नाश करनेवाला। रोग-कीटाणु मानव शरीर के परमशत्रु हैं, अतएव वे राक्षस हैं। वेद ने भी रोगोत्पादक कृमियों को राक्षस माना है। अग्नि, रोग-कीटाणुओं का नाशक होने से ही इसका नाम 'रक्षोहा' पड़ा। वेद अग्नि को

"अग्निचविश्वशंभुवं"

"शान्ति और आरोग्य-दाता" कहता है। वैसे अग्नि दाहक है, किन्तु उचित प्रयोग से वही रोग-नाशक है। आज भी हम देखते हैं कि ग्रामीण जनता भयानक-से-भयानक रोगों को अग्नि में तपाये लोहे आदि पदार्थों से दागकर नष्ट कर देती है। पशुओं को ही नहीं, बल्कि मनुष्यों को भी दागते हैं। इसका वैद्यक-ग्रंथों में भी वर्णन है। उठते हुए दाद को यदि इतनी गर्मी पहुँचाई जाय कि रोगोत्पादक कीटाणु जल जायँ, तो दाद अच्छा हो जायगा। दाद की भयानक दशा में उसे तपे हुए लोहे से जला देने से भी वह चला जायगा। यह आसुरी प्रयोग है।

अग्नि-चिकित्सा हवन-द्वारा होती है। हवन की प्रशंसा में

तो सारा वेद भरा पड़ा है। यद्यपि अभी तक 'हवन' की भिन्न-भिन्न विधि भिन्न-भिन्न रोगों को हटाने के लिये नहीं निर्माण हो सकी है, तथापि इतना तो निस्सङ्कोच कहा जा सकता है कि हवन असाध्य रोगों को भी दूर कर सकता है। अथर्ववेद सङ्केत कर रहा है कि—

"मुञ्चामित्वा हविषाजीवनाय।
कमज्ञातयक्ष्माहुतराजयक्ष्मात् ॥" ३ । १ । १

अर्थ—हवन-द्वारा अज्ञातरोग तथा क्षयरोग से भी तुम्हें दीर्घ जीवन के लिये छुड़ाता हूँ। हवन को उस चिकित्सा के रूप में रखना चाहिये, जो रोग के कीटाणुओं को उत्पन्न ही न होने दे। जिस घर में हवन होता है और जो विधिपूर्वक अर्थात् वायु-शोधक एवं आरोग्यवर्द्धक पदार्थों का नित्य हवन करता है, वह दाद तो क्या किसी रोग से पीड़ित नहीं होता। हवन करनेवाले को चाहिये कि शरीर को हवन करते समय खुला रखे। वैदिक काल में यज्ञविधि का बहुत प्रचार था, यही कारण था कि उन दिनों रोग होते ही नहीं थे। ज्यों-ज्यों इस विधि का ह्रास हुआ, त्यों-त्यों रोगों का यहाँ साम्राज्य होता गया। आज देखिए, शायद ही कोई नीरोग निकले। गोपथ में लिखा है—

"भैषज्य यज्ञावाएतें। तन्मादृतुसन्धिषुप्रयुज्यंते।
ऋतुसन्धिषु वैव्याधिर्जायते ॥ उ० १ । १९

अर्थ—ये यज्ञ औषधियों के ही हैं, इस कारण ऋतुओं की सन्धि में यज्ञ किये जाते हैं; क्योंकि ऋतुओं में रोग उत्पन्न होते हैं। पहले मौसिम बदलने के समय ऋषि-मुनिगण विशाल यज्ञों का आयोजन कर संसार में आरोग्यता फैलाते थे और जनता की रोगोत्पादक कीटाणुओं से रक्षा करते थे। आज वह समय नहीं है। विपरीत युग है। हम रोगग्रस्त हैं। हमें हवन-चिकित्सा-द्वारा रोगों से बचना चाहिये।

सौर-चिकित्सा

'सूर्य' आग्नेयतत्व है। सूर्य की किरणों-द्वारा जो चिकित्सा होती है, उसे सौर-चिकित्सा कहते हैं। वेद कहता है—

"सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च।" ऋग्वेद १।११५।१

सूर्य जड़चेतन का आत्मा है। इसी प्रकार प्रश्नोपनिषद् में कहा है—

"आदित्योह वै प्राणः।"

"यत्सर्वं प्रकाशयति तेन सर्वान् प्राणान्
रश्मिषु सं निधत्ते।"

सूर्य ही प्राण है, उसकी किरणों में प्राण है। अथर्व वेद में लिखा है—

"उद्यन्नादित्यः क्रिमीन्हन्तु निम्रोचन्हन्तु रश्मिभिः।

ये अन्त. क्रिमियोगवि ॥ २।३२।१

उदय-अस्त होनेवाला सूर्य उन कीटाणुओं को नष्ट करता है, जो हमारे शरीर या पृथ्वी में हैं। सूर्य की किरणे कीटाणुओं का नाश करती हैं। इसे सब जानते हैं कि सूर्य-प्रकाश में रहने वाला प्राणी—स्वस्थ, बलवान, नीरोग और सहनशील होता है, और जो सूर्य-प्रकाश से घबराते हैं या धूप से बचने को अपना बड़प्पन समझते हैं, वे रोगी, पीले, सफेद रंग के शरीर वाले, निर्बल होते हैं। स्वास्थ्य की इच्छा रखनेवाले मनुष्यों को प्रतिदिन नियमपूर्वक खुले शरीर शुद्ध सूर्य-प्रकाश में रहना चाहिये। जिन लोगों के शरीर पर सूर्य की किरणें पड़ती हैं; उन पर दाद का कीटाणु अपना अड्डा नहीं जमा सकता। सूर्य-प्रकाश और उसके ताप से प्रत्येक रोग के कीटाणु घबराते हैं। यहाँ तक कि क्षय के कीटाणु तक सूर्य-प्रकाश एवं ताप से मर जाते हैं। सारांश यह है कि दाद के कीटाणु सूर्य-किरणों-द्वारा नष्ट हो जाते हैं, अतएव उनका उपयोग करने से रोगी स्वस्थ हो सकता है। सूर्य के प्रकाश में दाद के स्थान को ऐसा रखे कि किरणें सीधी पड़ें। इस प्रकार नित्य घंटों धूप में रहने से दाद अच्छा हो जायगा।

उपवास-चिकित्सा

उपवास के द्वारा आजकल रोग-शमन किये जाने की विधि पर लोगों ने ध्यान देना आरंभ कर दिया है। वैसे तो उपवास-विधि भारत की प्राचीन खोज है, किन्तु जब से इसे धर्म के साथ बाँध दिया है, तब से इसका मुख्य उद्देश्य नष्ट होकर रूप बदल गया है। आजकल उपवास स्वर्ग-प्राप्ति, मोक्ष तथा धर्म का एक अंग बन गया है, परन्तु आयुर्वेद ने इसे केवल स्वास्थ्य-सम्पादन का एक साधन माना है। उपवास से हमारा मतलब यहाँ यह नहीं है कि केवल अन्न का त्याग करके दिनभर फल-फूल, सिंघाड़े की पूरी, मिठाई, कलाकन्द वगैर. ठूँस-ठूँस कर खाया जाय; बल्कि केवल जलपर ही रहा जाय और कई दिनों तक रहा जाय।

दाद के रोगी को कम-से-कम पन्द्रह दिनों तक केवल जल पीकर ही उपवास करना चाहिये। जल से शरीरस्थमलों की शुद्धि होती रहेगी। यदि पानी के एक गिलास में पीते वक्त आठ-दस बूंदें नीबू का रस निचोड़कर पीया जाय, तो विशेष लाभ-प्रद होगा। उपवास में हिम्मत की आवश्यकता है। दूसरे-तीसरे दिन घबराकर छोड़ देने से कोई लाभ नहीं। लंघन-चिकित्सा के दिनों में चिंता, श्रम, भ्रमण, जागरण, धूप आदि से बचने की

आवश्यकता है। जबर्दस्ती नहीं; बल्कि प्रसन्नता पूर्वक यह चिकित्सा करनी चाहिये।

बीच-बीच में एनिमा (वस्ति) क्रिया-द्वारा मल की शुद्धि करते रहना जरूरी है। अन्यथा मलाशय में गाँठे पड़कर कष्ट पहुँचाएँगी। केवल जल के द्वारा मल कहाँ से आया, इत्यादि शंकाएँ करने की जरूरत नहीं है; एनिमा अवश्य लेना चाहिये। यदि पन्द्रह दिनों से अधिक उपवास रखने की आवश्यकता मालूम हो, तो रखना चाहिये। उपवास की समाप्ति पर भोजन का विशेष ध्यान रखने की जरूरत है; अन्यथा मृत्यु तक संभव है। जब उपवास-अवधि पूर्ण हो जाय, तब कई दिनों तक गोदुग्ध, साबू-दाना वगैर लेना चाहिये। पश्चात् जल्दी पचनेवाले या फलों का रस, खिचड़ी, मूँग की दाल या उसका पानी थूली (गेहूँ की) इत्यादि पर कई दिन निकाले। बाद में जब अन्न पचाने लायक मेदा हो जाय, तब गेहूँ की रोटी, शाक-भाजी वगैरः सेवन करें। उर्द, अरहर, मसूर की दाल, मिठाई, तले हुए गुरु पाकी भोजन, मांस, मद्य तथा दूसरे मादक पदार्थों से दूर रहे। एक महीने बाद इन्हे काम मे लाने की आवश्यकता हो, तो प्रयोग करें। मांस और मादक द्रव्यों से अपने को बचाएँ। इस चिकित्सा से दाद चला जायगा।

अन्न-चिकित्सा

वेद में अन्न को 'औषधि' कहा गया है। वास्तव में अन्न औषधि है, क्योंकि वह प्राणाधार है। यदि अन्न को उचित रीति से उचित परिमाण में सेवन किया, जाय तो वह एक "महान औषधि है—अमृत है।" अन्यथा वही विष है—प्राणनाशक है। हम यहाँ दाद के रोगियों के लाभार्थ अन्न-चिकित्सा लिख देना चाहते हैं। जो लोग उपवास न कर सकें, वे इससे लाभ उठाएँ।

पहले साधारण-सा जुलाब लेकर पेट साफ करलें। बाद में इक्कीस दिनों तक चने के आटे की रोटियाँ खाएँ। चना अच्छा देखकर लिया जाय और उसका छिलके सहित आटा बनवालें। दाल का आटा (बेसन) न हो। उक्त आटे की रोटियाँ बनवा कर खाएँ। रोटियों में नमक न डाला जाय। केवल रोटियों पर ही इक्कीस दिन गुजारें। साग-भाजी, फल-फूल, शक्कर, वगैरः कुछ भी न खाएँ। यदि जरूरत पड़ जाय, तो घी से रोटियों को चुपड़ लें, और कुछ भी न खाएँ। अवश्य लाभ होगा।

तैल-चिकित्सा

जिसके शरीर पर दाद हो, उसे शुद्ध सरसों का तेल शरीर पर मालिश कराना चाहिये। यदि सरसों का तेल न मिलसके, तो तिल का तेल ही काम में लाएँ। रगड़-रगड़ कर शरीर मे तेल प्रवेश कराया जाय। विशेषतः दाद की जगह पर मालिश की जाय। तेल मलकर एक घण्टा सूर्य की तेज धूप मे बैठें वाद विधि पूर्वक स्नान करले। इस प्रकार कुछ दिनों तक नित्य नियम पूर्वक इसका उपयोग करने से दाद चला जाता है।

उक्त प्राकृतिक-चिकित्साएँ भी चल सकती हैं, जैसे—(जल-चिकित्सा के साथ वायु-चिकित्सा, सौर-चिकित्सा, मानसिक-चिकित्सा भी चलती रहें, तो हानि कुछ नहीं; बल्कि लाभ हा है,) परन्तु यह वात औषधि-चिकित्सा में नहीं पाई जाती। इसलिए इन चिकित्साओं का स्थान उच्च है। इतना अवश्य है कि इनके द्वारा रोग घटाने में दीर्घकाल की आवश्यकता होती है, परन्तु फल स्थायी और आनन्दमय होता है। प्राकृतिक-चिकित्सा में रोगी को धैर्य, आत्मविश्वास और शांति का होना आवश्यक है।)

स्वास्थ्य सम्बन्धी उत्तमोत्तम पुस्तकें !

पृष्ठ ४५० **आरोग्य-मन्दिर** मूल्य २)

यह स्वास्थ्य-रक्षा-सम्बन्धी विभिन्न विषयों पर अनुसन्धान-पूर्ण सुचिन्तित लेखों का संग्रह है। हिन्दी में स्वास्थ्य सम्बन्धी जितना साहित्य अबतक प्रकाशित है, सबका सार इसमें मिलेगा।

पृष्ठ ४०० **आहार-विज्ञान** मूल्य २)

भोजन ही जीवन का आधार है। प्रत्येक दीर्घायु-कामी व्यक्ति को भोज्य वस्तुओं के गुण-दोषों का ज्ञान निश्चय ही होना चाहिये, किन्तु इस पुस्तक के सिवा वह अनमोल ज्ञान हिन्दी की किसी भी पुस्तक में सुलभ नहीं है।

पृष्ठ १८४ **सुखी-गृहिणी** मूल्य १)

स्वस्थ माताएँ ही सबल सन्तान की जननी होती हैं; किन्तु खासकर स्त्रियों ही के लिये केवल स्वास्थ्य-रक्षा-सम्बन्धी महत्त्व-पूर्ण बातें बताने वाली हिन्दी में कोई अकेली पुस्तक नहीं है— अगर है, तो यही एक, एक मात्र यही, बस। हाथ कंगन को आरसी क्या ?

जीवन-रक्षा

बालक ही राष्ट्र के मूलधन हैं। उनके जीवन की रक्षा से ही

राष्ट्र का वास्तविक कल्याण सम्भव है। यह पुस्तक राष्ट्र की इस पूँजी की रक्षा करने का वीमा लेती है। यदि इसे वालक पढ़ें तो आँखफोड़ हो जायँ, माता-पिता पढ़ें तो आदर्श सन्तान पा जायँ।

दीर्घ जीवन

यह पुस्तक आपको वतायेगी कि हवा, भोजन, पानी, वस्त्र, गृह, व्यायाम आदि क्या हैं, उनके क्या कार्य हैं, उनमें कैसे बिगाड़ पैदा होता है और वे किन रूपों में हमारे जीवन को सुखी, हमारी आत्मा को प्रसन्न और हमारी आयु को दीर्घ वना सकते हैं। मूल्य केवल ।)

अमृतपान

यदि आप सहज प्राकृतिक उपाय उषः-जलपान से ही वड़े-वड़े भीषण रोगों को जैसे—अग्निमाँद्य, शूल, उदावर्त्त, संग्रहणी, ज्वर, नेत्ररोग, शिरोरोग, अर्श, शोथ, रक्तपित्त, और प्रतिश्याय आदि दूर करना चाहते हैं; तो इस पुस्तक को मँगा कर अवश्य पढ़िये। मूल्य केवल ।)

सिर का दर्द

यह पुस्तक वतलायेगी कि मस्तिष्क की रचना कैसी है, उसमें जो सूक्ष्म तन्तु हैं, उनकी क्या क्रियाएँ हैं, उन तन्तुओं में खराबी क्यों होती है, सिर में दर्द क्यों होने लगता है, कितने प्रकार का

सिर-दर्द उत्पन्न होता है। सिर-दर्द का प्राकृतिक उपाय क्या है? आदि बातों के जानने के लिए एक प्रति मंगाकर पढ़िये। मूल्य केवल ॥)

सौंफ-चिकित्सा

यदि आप सौंफ जैसे पदार्थ से ही सम्पूर्ण रोगों का नाश करना चाहते हैं, तो "सौंफ-चिकित्सा" को एक बार अवश्य पढ़िये। सौंफ से ही प्रमेह, प्रदर, मूत्ररोग, अजीर्ण, विसूचिका, श्वास, अतीसार और ज्वर आदि रोग दूर हो जायँगे। मूल्य केवल ।)

सफलता का रहस्य

यह मादक वस्तुओं का त्याग, सच्ची स्वतन्त्रता, अच्छी सोसाइटी, कर्मण्यता, एकाग्रता और सच्चरित्रता आदि का रहस्य बताएगी। जीवन में मनुष्य को किस तरह सफलता मिल सकती है, यदि सफलता मिलती है, तो वह किस तरह और जीवन में कितनी बार मिलती है। सफलता के कौन-कौन अङ्ग हैं? आदि बातों के जानने के लिए अवश्य पढ़िये। मूल्य केवल १)

मिलने का पता—

महाशक्ति-साहित्य-मन्दिर,

बुलानाला, बनारस सिटी